अध्याय – 14

पादप कार्यिकी एवं जल संबंध

(Plant Physiology and Water Relations)

वनस्पति विज्ञान की वह शाखा जिसमें पौधों की जैविक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है, पादप कार्यिकी कहलाती है। पौधों की कोशिकाओं में होने वाले जैव–भौतिक व जैव–रासायनिक परिवर्तन तथा इनका वातावरण से होने वाला सभी प्रकार का आदान–प्रदान जैविक क्रियाओं के अन्तर्गत आता है।

पादप कार्यिकी के अध्ययन द्वारा पौधों में होने वाली विभिन्न जैविक क्रियाओं की क्रियाविधि ज्ञात की जाती है। विभिन्न जैविक प्रक्रमों की क्रिया विधि को समझकर व उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं को जानकर आर्थिक रूप से उपयोगी पौधों के उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। पौधों में होने वाले कई रोगों को नियंत्रित किया जा सकता है। इसी तरह पौधों में नाइट्रोजन उपापचय की क्रियाओं को जान कर जैविक नाइट्रोजन यौगिकीकरण द्वारा फसलों में प्रोटीन की मात्रा में वृद्धि की जा सकती है।

पादप कार्यिकी का वनस्पति विज्ञान की अन्य शाखाओं जैसे– पादप आकारिकी, शारीरिकी, वर्गीकरण, पारिस्थितिकी, पादप रोग विज्ञान, आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन से गहन संबंध है लेकिन पादप कार्यिकी का अध्ययन मुख्य रूप से कोशिका विज्ञान से संबंधित है। कोशिका प्रत्येक जीवधारी की मूल संरचनात्मक तथा क्रियात्मक ईकाई है।

पौधों के शारीरिक क्रियाकलाप के लिए जल अनिवार्य है और यह सभी जीवित प्राणियों के लिए एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह वह माध्यम उपलब्ध कराता है जिसमें सभी पदार्थ घुलनशील होते हैं। जीव द्रव्य में हजारों तरह के अणु पानी में घुले होते हैं और निलंबित रहते हैं। एक तरबूज के अंतर्गत 92 प्रतिशत से अधिक भाग पानी का होता है तथा ज्यादातर शाकीय पौधों में शुष्क पदार्थ केवल 10 से 15 प्रतिशत होता है, बाकी जल होता है। हालांकि यह बात बिल्कुल सच है कि एक पौधे में जल का वितरण भिन्न–भिन्न होता है, काष्ठ वाले भाग में थोड़ा कम होता है तथा लचीले भाग में बहुत ज्यादा। एक बीज सूखा सा दिख सकता है; परन्तु फिर भी उसमें पानी की कुछ मात्रा होती है अन्यथा वह जीवित नहीं रहेगा और श्वसन भी नहीं करेगा।

स्थलीय पौधे प्रतिदिन भारी मात्रा में पानी ग्रहण करते हैं; लेकिन पत्तियों से इनका अधिकतर भाग वाष्पोत्सर्जन द्वारा हवा में उड़ जाता है। मक्का का एक परिपक्व पौधा एक दिन में लगभग तीन लीटर पानी अवशोषित करता है जबकि सरसों का पौधा लगभग पांच घण्टे में अपने वजन के बराबर पानी अवशोषित कर लेता है। पानी की इस उच्च मात्रा की मांग के कारण, यह आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि कृषि एवं प्राकृतिक पर्यावरण में पौधे की वृद्धि एवं उत्पादकता को सीमित करने वाला सीमाकारी कारक प्रायः जल ही होता है।

जल विभव या जल अंतःशक्ति

पादप–जल संबंध की व्याख्या करने के लिए कुछ विशेष मानक शब्दों की समझ अध्ययन को आसान बना देती है। जल विभव जल की गति या परिवहन को समझने के लिए आधारभूत धारणा है। विलेय विभव या विलेय अंतःशक्ति तथा दाब विभव या दाब अंतःशक्ति जल विभव को सुनिश्चित करने वाले दो मुख्य कारक हैं।

जल के अणुओं में गतिज ऊर्जा पाई जाती है। द्रव तथा गैस की अवस्था में वे अनियमित गति करते हुए पाए जाते हैं, यह गति तीव्र तथा स्थिर दोनों तरह की हो सकती है। किसी तंत्र में यदि अधिक मात्रा में जल हो तो उसमें अधिक गतिज ऊर्जा तथा जल विभव होगा। अतः यह सुनिश्चित है कि शुद्ध जल में सबसे ज्यादा जल विभव होगा। यदि कोई दो अंतर्विष्ट जल तंत्र संपर्क में हो तो पानी के अणु की अनियमित गति के कारण जल की वास्तविक गति ज्यादा ऊर्जा वाले भाग से कम ऊर्जा वाले भाग में होगी। अतः पानी उच्च जल विभव वाले अंतर्विष्ट जल के तंत्र से कम

जल विभव वाले तंत्र की ओर जाएगा। पदार्थ की गति की यह प्रक्रिया ऊर्जा की प्रवणता के अनुसार होती है और विसरण कहलाती है। जल विभव को ग्रीक चिन्ह Psi या ψ से चिह्नित किया गया है और इसे पासकल्स जैसी दाब इकाई में व्यक्त किया गया है। परंपरा के अनुसार शुद्ध जल के जल विभव को एक मानक ताप पर बिना दाब पर शून्य माना गया है।

यदि कुछ विलेय शुद्ध जल में घोले जाते हैं, तो घोल में मुक्त जल के अणु कम हो जाते हैं। जल की सांद्रता घट जाती है और जल विभव भी कम हो जाता है। इसीलिए सभी विलयनों में शुद्ध जल की अपेक्षा जल विभव निम्न होता है। इस निम्नता का परिमाण एक विलेय के जलीयकरण के कारण है जिसे विलेय विभव कहा जाता है (या ψs)। ψs सदैव नकारात्मक होता है, जब विलेय के अणु अधिक होते हैं तो ψs अधिक नकारात्मक होता है। वायुमंडलीय दबाव पर विलेय या घोल का जल विभव ψs = विलेय विभव ψs होता है।

यदि घोल या शुद्ध जल पर वायुमंडलीय दबाव से अधिक दबाव लगाया जाए तो उसका जल विभव बढ़ जाता है। जब विसरण के कारण पौधे की कोशिका में जल प्रवेश करता है तब यह कोशिका द्रव्य के साथ–साथ कोशिका भित्ति की ओर दाब लगाता है और कोशिका को स्फीत बना देता है। यह दाब विभव को बढ़ा देता है। दाब विभव ज्यादातर सकारात्मक होता है। हालांकि पौधों में नकारात्मक विभव या जाइलम के जल खंड में तनाव एक तने में जल के परिवहन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दाब विभव को ψp से चिह्नित किया गया है। कोशिका का जल विभव, विलेय एवं दाब विभव दोनों ही से प्रभावित होता है। इन दोनों के बीच संबंध निम्न प्रकार से होता है:

$$\psi = \psi s + \psi p$$

परासरण (Osmosis)

पौधे की कोशिका, कोशिका झिल्ली या एक कोशिका भित्ति से घिरी होती है। यह कोशिका भित्ति जल एवं विलयन में पदार्थों के लिए मुक्त रूप से पारगम्य होती है। अतः यह परिवहन या गति के लिए बाधक नहीं होती है। एक पौधे की कोशिकाओं में प्रायः एक केन्द्रीय रसधानी होती है, जिसका रसधानीयुक्त रस कोशिका के विलेय विभव में भागीदारी करता है। पादप कोशिका में कोशिका झिल्ली तथा रसधानी की झिल्ली, टोनोप्लास्ट, दोनों एक साथ कोशिका के भीतर एवं बाहर अणुओं की गति निर्धारित करने के लिए महत्वपूर्ण होते हैं।

परासरण विशेष रूप से एक विभेदक अर्धपारगम्य झिल्लिका के आर–पार जल के विसरण के लिए संदर्भित किया जाता है। परासरण स्वतः ही प्रेरित बल की अनुक्रिया से पैदा होता है। परासरण की दिशा एवं गति दाब प्रवणता एवं सांद्रता प्रवणता पर निर्भर करती है। जल अपने उच्च रासायनिक विभव (या सांद्रता) से निम्न रासायनिक विभव में तब तक संचारित होता है जब तक कि साम्यता पर न पहुंच जाए। साम्यता पर दो कक्षों का जल विभव एक समान होना चाहिए।

आलू द्वारा परासरणमापी (ऑस्मोमीटर) बनाया जा सकता है। इसके लिये आलू का छिलका हटाकर बीच में एक गुहा बना दी जाती है और उसमें शर्करा का सांद्र घोल भर दिया जाता है। इसे पानी में रखने पर आलू के कंद की गुहा में रखा शर्करा का सांद्र घोल परासरण के द्वारा पानी को एकत्र कर लेता है।

चित्र 14.1 में दो कक्षों अ एवं ब में रखे गये विलयनों को अर्धपारगम्य झिल्ली द्वारा अलग–अलग किया गया है। यहाँ जल अ भाग से ब भाग की ओर परासरित होगा।

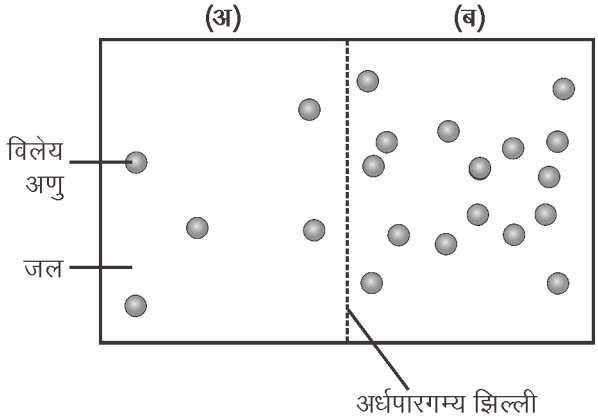

चित्र 14.1 : परासरण

इसे दूसरे प्रयोग द्वारा भी दर्शाया जा सकता है (चित्र 14.2)। एक कीप के चौड़े मुंह पर अर्धपारगम्य झिल्ली लगाकर जल से भरे बीकर में चित्रानुसार रख दें तथा संकरे मुंह से शर्करा युक्त विलयन भर दें। जल कीप की ओर गति करेगा और कीप में घोल का स्तर बढ़ जाएगा। यह प्रक्रिया तब तक जारी रहेगी जब तक कि साम्यता की स्थिति नहीं आ जाती।

किन्तु यदि कीप के ऊपरी भाग पर बाहरी दाब डाला जा सकता है ताकि झिल्लिका के माध्यम से कीप में पानी विसरित नहीं होगा। यह दाब पानी की विसरित होने से रोकता है। विलेय सांद्रता अधिक होने पर पानी को विसरित होने से रोकने के लिए अधिक दबाव की भी आवश्यकता होगी। संख्यात्मक आधार पर परासरण दाब परासरण विभव के बराबर होता है लेकिन इसका संकेत विपरीत होता है। परासरण दबाव में प्रयुक्त दाब सकारात्मक होता है जबकि परासरण विभव नकारात्मक होता है।

जीवद्रव्यकुंचन (Plasmolysis))

पादप कोशिकाओं (या ऊतकों) में जल की गति के प्रति व्यवहार करना उसके आस–पास के घोल पर निर्भर करता है। यदि बाहरी घोल कोशिका द्रव्य के परासरण दाब को संतुलित करता है तो उसे हम समपरासारी कहते हैं। यदि बाहरी विलेयन कोशिका द्रव्य से अधिक तनुकृत है तो उसे अल्पपरासरी कहते

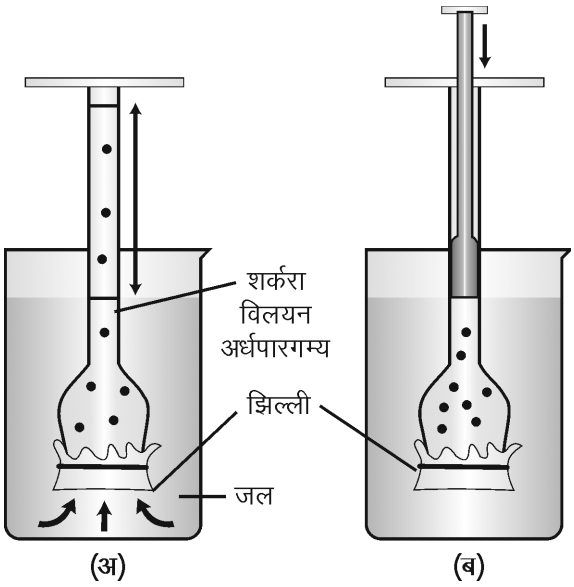

चित्र 14.2 : परासरण का एक प्रदर्शन। एक कीप में शर्करा विलयन भर कर, जल से भरे बीकर में उल्टा रखा गया है। जिसका मुख अर्ध पारगम्य झिल्ली से बन्द है। (अ) जल झिल्ली को पार करते हुए विसरण से कीप के घोल कर स्तर बढ़ाएगा (जैसा की तीर के निशान दिखा रहे हैं।) (ब) कीप में जल के बहाव को रोकने के लिए दाब का इस्तेमाल किया जा सकता है जैसा कि चित्र में दिखाया गया है।

हैं और यदि बाहरी विलेयन बहुत अधिक सांद्रतायुक्त होता है तो इसे अतिपरासारी कहते हैं। कोशिकाएं अल्पपरासारी घोल में फूलती हैं और अतिपरासारी में सिकुड़ती हैं।

जीवद्रव्यकुंचन तब होता है जब कोशिका से पानी बाहर गति कर जाए तथा पादप कोशिका की कोशिका झिल्ली सिकुड़कर कोशिका भित्ति से अलग हो जाती है। यह तब होता है, जब एक कोशिका (या ऊतक) को अतिपरासारी घोल में डाला जाता है। सबसे पहले जीवद्रव्य से पानी बाहर आता है फिर रसधानी से। जब कोशिका से विसरण द्वारा पानी निकल कर बाह्यकोशिका द्रव्य में जाता है, तब जीवद्रव्य कोशिका भित्ति से अलग हो जाती है और इसे कोशिका का जीवद्रव्य कुंचन कहा जाता है। जल का परिवहन झिल्ली के आर–पार उच्चतर जल विभव क्षेत्र (अर्थात् कोशिका) निम्नतर जल विभव क्षेत्र में कोशिका के बाहर (चित्र 14.3) जाता है।

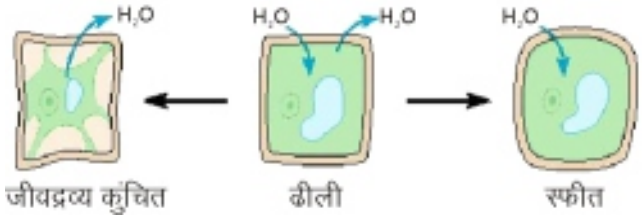

चित्र 14.3 : पादप कोशिका का जीवद्रव्यकुंचन

जीवद्रव्यकुंचित कोशिका में कोशिका भित्ति एवं संकुचित जीवद्रव्य के बीच की जगह को कौन भरता है?

जीवद्रव्यसंकुचन की प्रक्रिया प्रायःप्रतिवर्ती होती है। जब कोशिकाओं को अल्पपरासारी घोल (उच्च जल विभव या जीवद्रव्य की तुलना में तनुकृत) विलेयन में रखा जाता है तो कोशिका में जल विसरित होता है और जीवद्रव्य की भित्ति के विरुद्ध दबाव बनाने का कारण बनता है जिसे स्फीति दाब कहा जाता है। पानी घुसने के कारण जीवद्रव्य द्वारा प्रकट किये गए कठोर भित्ति के विपरीत दाब को दाब विभव या ψ_p कहते हैं। कोशिका भित्ति की दृढ़ता के कारण कोशिका नहीं फटती है। यह स्फीति दाब अंततः कोशिकाओं के विस्तार एवं फैलाव के लिए उत्तरदायी होता है।

अंतःशोषण (Imbibition)

अंतःशोषण एक विशेष प्रकार का विसरण है। जब ठोस एवं कोलॉइड्स द्वारा पानी को अवशोषित किया जाता है तो इसके कारण उसके आयतन में वृद्धि होती है। अंतःशोषण के प्रतिष्ठित उदाहरणों में बीजों और सूखी लकड़ियों द्वारा जल का अवशोषण है। फूली हुई लकड़ी या काष्ठ के द्वारा पैदा किये गए दाब का प्रयोग आदि मानव द्वारा बड़ी चट्टानों एवं पत्थरों को तोड़ने के लिए किया जाता था। यदि अंतःशोषण के द्वारा दाब नहीं होता तो नवोद्भिद् खुली जमीन पर उभरकर नहीं आ पाते, वे संभवतः बाहर आकर स्थापित नहीं हो पाते।

अंतःशोषण भी एक प्रकार का विसरण है, क्योंकि जल की गति सांद्रण प्रवणता के अनुसार है। बीज या अन्य ऐसी ही सामग्रियों में पानी लगभग नहीं के बराबर है अतः ये आसानी से जल का अवशोषण कर लेते हैं। अवशोषक तथा अंतःशोषित होने वाले द्रव के बीच जल विभव प्रवणता आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, कोई भी पदार्थ जो किसी भी द्रव को अंतःशोषित करता हो, अवशोषक और द्रव के बीच बंधुता होना पहली शर्त है।

जल परिवहन (Water Movement)

लंबी दूरी तक पदार्थों का परिवहन केवल विसरण द्वारा नहीं हो सकता है। विसरण एक धीमी प्रक्रिया है। यह छोटी दूरी तक अणुओं को पहुंचाने में कारगर है। उदाहरण के लिए : एक प्रारूपिक पादप कोशिका (लगभग 50μm) के आर–पार अणु को गति करने के लिए लगभग 2.5s समय लगता है।

बड़े एवं जटिल जीवों में बहुधा पदार्थों का परिवहन लंबी दूरी तक होता है। कभी–कभी उत्पादन या अवशोषण एवं संग्रहण के स्थान एक दूसरे से काफी दूर होते हैं, अतः विसरण एवं सक्रिय परिवहन काफी नहीं है। इसलिए विशिष्ट व्यापक दूरी का परिवहन तंत्र आवश्यक हो जाता है ताकि आवश्यक पदार्थ निश्चित रूप से तीव्र गति से पहुंच सके। जल, खनिज तथा भोजन सामूहिक प्रणाली द्वारा परिवहन करते हैं। सामूहिक या थोक प्रवाह में पदार्थों का एक स्थान से दूसरे स्थान तक

परिवहन, दो बिंदुओं के बीच दाब की भिन्नता के परिणामस्वरूप होती है। सामूहिक प्रवाह की यह विशिष्टता है कि पदार्थ चाहे घोल हो या निलंबन नदी के प्रवाह की तरह ही बहता है। यह विसरण से भिन्न होता है, जहां पर विभिन्न पदार्थ अपनी सांद्रता प्रवणता के अनुसार स्वतंत्र रूप से परिवहनित किये जाते हैं। थोक प्रवाह को तो धनात्मक जलीय दाब प्रवणता या ऋणात्मक जलीय दाब प्रवणता (जैसेः पुआल के द्वारा चूषण) के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

पदार्थों की पादपों के संवहनी ऊतकों के द्वारा थोक या सामूहिक गति को स्थानांतरण कहते हैं। उच्च पादपों में बहुत ही उच्च विशेषीकृत संवहनी ऊतक – जाइलम और फ्लोएम होते हैं। जाइलम मुख्य रूप से जल, खनिज लवणों, कुछ कार्बनिक नाइट्रोजन तथा हार्मोन को जड़ से वायवीय भाग तक स्थानांतरित करता है। फ्लोएम मुख्य रूप से विभिन्न प्रकार के कार्बनिक एवं अकार्बनिक विलयनों को पत्तियों से पादपों के विभिन्न भागों में स्थानांतरित करता है।

अवशोषण (Absorption)

जल और खनिज तत्वों के अवशोषण की जिम्मेदारी विशेष रूप से मूल रोमों की होती है जो कि जड़ों के अग्र शीर्ष भाग पर लाखों की संख्या में पाए जाते हैं। मूल रोम पतली भित्ति वाले होते हैं जो अवशोषण के लिए व्यापक रूप से क्षेत्र प्रदान करते हैं। जल, खनिज–विलेय के साथ मूल रोम से होकर शुद्ध रूप से विसरण प्रक्रिया के द्वारा अवशोषित किया जाता है। एक बार जब मूल रोम द्वारा जल अवशोषित कर लिया जाता है तब वह जड़ों की गहरी पर्तों में दो भिन्न पथों से गति करता है।

1. एपोप्लास्ट पथ (Apoplastic pathway) – एपोप्लास्ट निकटवर्ती कोशिका भित्ति का तंत्र है। जड़ों के अंतस्त्वचा में मौजूद कैस्पेरीन पट्टी को छोड़कर पूरे पौधे में फैला रहता है (चित्र 14.4)। जल का एपोप्लास्टिक परिवहन केवल अंतरकोशिकीय जगहों और कोशिकाओं की भित्ति में उत्पन्न होता है। एपोप्लास्ट के माध्यम से होने वाला परिवहन कोशिका झिल्ली को पार नहीं करता है। यह गति प्रवणता पर निर्भर करती है। एपोप्लास्ट जल के परिवहन में कोई भी बाधा नहीं डालता है और जल परिवहन सामूहिक प्रवाह के माध्यम से होता रहता है। जैसे ही जल अंतरकोशिकी गुहा या वातावरण में वाष्पित होता है तो एपोप्लास्ट के सतत जल प्रवाह में तनाव उत्पन्न हो जाता है। अतः आसंजक एवं संशक्ति शीलता के कारण जल का सामूहिक प्रवाह होता है।

2. सिमप्लास्ट पथ (Symplastic pathway) – सिमप्लास्टिक तंत्र अंतः संबंधित जीव द्रव्य का तंत्र है। पड़ोसी कोशिकाएं प्लाज्मोडेस्मेटा से जुड़ी होती हैं जो कि जीव द्रव्य तंतु तक विस्तृत रूप से फैली रहती है। सिमप्लास्टिक परिवहन में जल कोशिकाओं के जीव द्रव्य के माध्यम से तथा अंतरकोशिकी परिवहन में यह जीव द्रव्य तंतु के माध्यम से आगे बढ़ता है। मूल कोशिकाओं के अंदर जल कोशिका झिल्ली के माध्यम से प्रवेश करता है, अतः इस प्रकार का परिवहन अपेक्षाकृत धीमा होता है। कोशिका द्रव्यी प्रवाहन सिमप्लास्टिक परिवहन सहायता करता है। कोशिका द्रव्यी प्रवाहन को *हाइड्रिला* की पत्ती की कोशिका में देखा जा सकता है जहाँ क्लोरोप्लास्ट का परिवहन प्रवाह के कारण आसानी से दिखाई पड़ सकता है।

जड़ों में अधिकतर जल प्रवाह एपोप्लास्ट के माध्यम से उत्पन्न होता है चूंकि वल्कुट–कोशिकाएं ढीली गठित होती है अतः जल की गति में किसी प्रकार का प्रतिरोध उत्पन्न नहीं होता। हालांकि वल्कुट की आंतरिक सीमा, अंतःत्वचा, पानी के लिए अप्रवेश्य होती है। ऐसा सुवेरिनमय मैट्रिक्स के कारण होता है जिसे कैस्पेरी पट्टी कहा जाता है। पानी का अणु इस पर्त को भेदने के असमर्थ होता है, अतः पुनः यह जल असुवेरिनमय कोशिका भित्ति क्षेत्र से झिल्लिका के माध्यम से कोशिका के अंदर प्रवेश करता है। इसके बाद जल सिमप्लास्ट के द्वारा गतिशील होता है और पुनः झिल्ली को पार करता है। ताकि जाइलम कोशिकाओं तक पहुंच सके। जल की गति मूलपरत से अंतःकोशिका तक

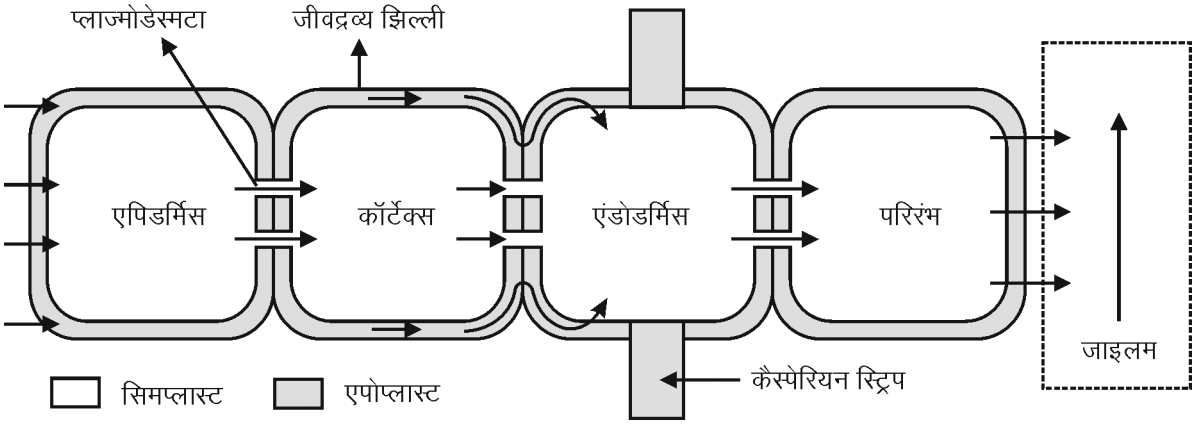

चित्र 14.4: जड़ में जल के गति का पथ

सिमप्लास्टिक होती है। यही एक मार्ग है जिससे पानी तथा अन्य विलेय संवहन ऊत्तक में प्रवेश करते हैं।

एक बार जाइलम ऊत्तक के भीतर पहुंचने पर जल पुनः कोशिकाओं के बीच तथा उसके आर–पार जाने के लिए स्वतंत्र हो जाता है। नई जड़ों में जल सीधे जाइलम वाहिकाओं या/और वाहिनिकाओं में प्रवेश करता है। ये जीवन रहित नलियां हैं और एक प्रकार से एपोप्लास्ट का हिस्सा भी है। मूल संवहनी तंत्र में जल तथा खनिज आयनों का मार्ग निम्न चित्र में संक्षेपीकृत किया गया है (चित्र 14.5)।

कुछ पौधों में अतिरिक्त संरचनाएं जुड़ी होती हैं जो उन्हें जल (एवं खनिजों) के अवशोषण में मदद करती हैं। माइकोराइजा जड़ के साथ फफूंदी (कवक) का सहजीवी संगठन है। फफूंदी या कवक तंतु नई जड़ों के आस–पास जाल बनाते हैं या वे मूल कोशिका में प्रवेश कर जाते हैं। कवक तंतु का एक बड़ा व्यापक तल क्षेत्र होता है जो भूमि से खनिज आयन एवं जल को मूल से अधिक मात्रा में अवशोषित कर लेता है। ये कवक जड़ को जल एवं खनिज उपलब्ध कराते हैं और बदले में जड़ें भी माइकोराइजा को शर्करा तथा नाइट्रोजन समाहित यौगिक प्रदान करते हैं। कुछ पौधों का माइकोराइजा के साथ अविकल्पी संबंध होते हैं। उदाहरण के लिए माइकोराइजा की उपस्थिति के बिना चीड़ का बीज न तो अंकुरित हो सकता है और न ही स्थापित हो सकता है।

जल संवहन (Water Movement)

गुरुत्वाकर्षण के विरुद्ध जल की गति के लिए क्रियाशील तथा निष्क्रिय दो कार्यप्रणाली उत्तरदायी है। जल संवहन के लिए निम्नलिखित क्रियायें हैं।

मूल दाब (Root Preasure)

जैसे कि मृदा के विभिन्न आयन सक्रियता के साथ जड़ों के संवहनी ऊतकों में परिवहनित होते हैं तो जल भी इसी प्रक्रिया का अनुसरण (अपनी विभव प्रवणता से) करता है तथा जाइलम के अंदर दाब बढ़ाता है। यह घनात्मक दाब ही मूल दाब कहलाता है और तने में कम ऊँचाई तक जल को ऊपर भेजने के लिए उत्तरदायी होता है। मूल दाब का प्रभाव रात तथा सुबह के समय देखा जा सकता है, जब वाष्पीकरण की प्रक्रिया कम होती है और अतिरिक्त पानी घास के तिनकों की नोक पर विशेष छिद्रों से स्रावित जल बूंदों के रूप में लटकने लगता है। इस प्रकार द्रव के रूप में पानी का क्षय बिन्दुस्राव (Guttation) कहलाता है।

जल परिवहन की कुल क्रिया में मूल दाब केवल एक साधारण दाब ही प्रदान कर पाता है। यह उच्च वृक्षों में जल के चलन में इनकी कोई बड़ी भूमिका नहीं होती है। मूल दाब का व्यापक योगदान जाइलम में पानी के अणुओं को निरंतर कड़ी के रूप में स्थापित रखने में हो सकती है जो कि अक्सर वाष्पोत्सर्जन के द्वारा पैदा किये गए वृहत् तनावों के कारण टूटती रहती है।

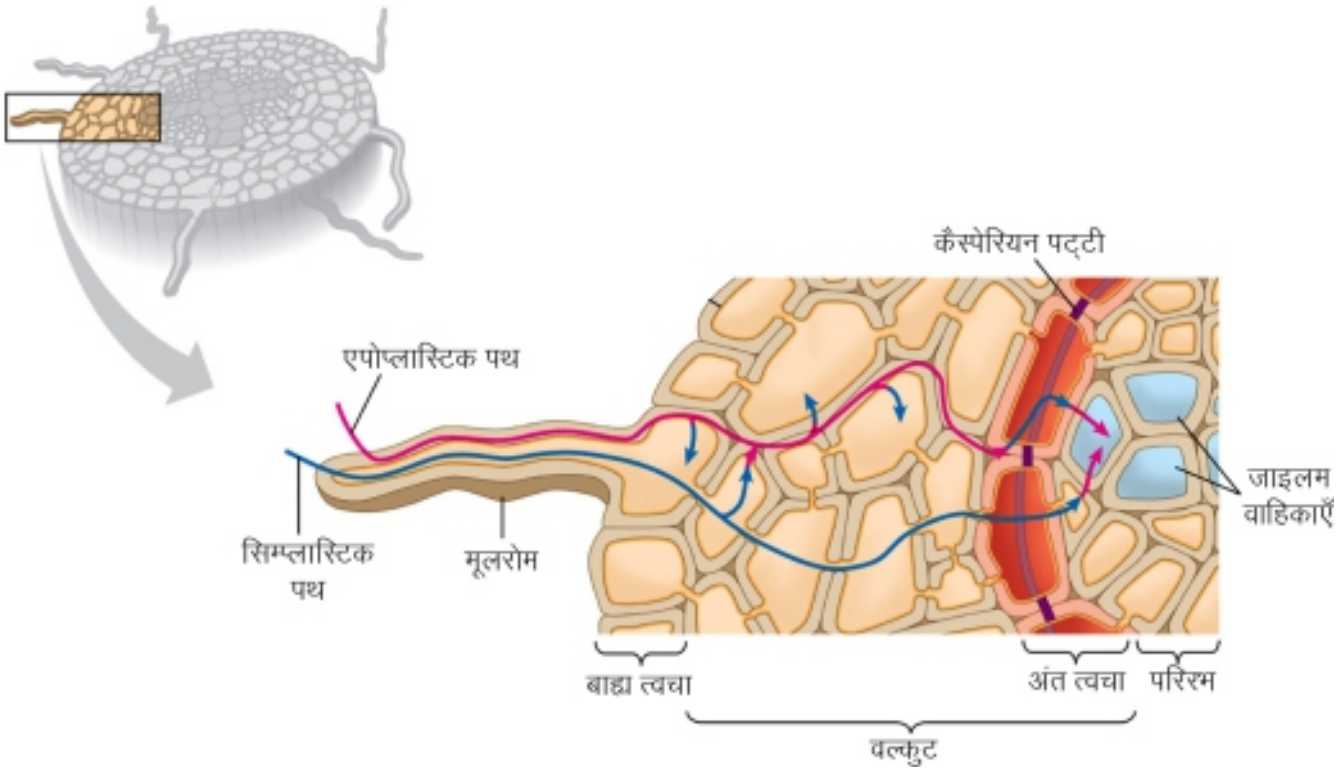

चित्र 14.5 : जल एवं आयन का सिम्प्लास्टिक एवं एपोलास्टिक पथ तथा जड़ों में प्रवाह

अधिकांश जल को परिवहन करने में मूल दाब की कोई भूमिका नहीं है। अधिकतर पौधों की आवश्यकता वाष्पोत्सर्जन खिंचाव से पूरी हो जाती है।

वाष्पोत्सर्जन खिंचाव अथवा ससंजन सिद्धान्त (Transpiration pull or cohesion theory)

यह मत डिक्शन एवं जॉली द्वारा 1894 में प्रस्तुत किया गया। इनके अनुसार प्राणियों की भांति पौधों में परिसंचरण तंत्र नहीं होता, इसके बावजूद, जाइलम के माध्यम से जल का ऊपरी बहाव पर्याप्त उच्च दर से, लगभग 15 मीटर प्रति घण्टे तक हो सकता है। इसका संचालन पत्तियों का वाष्पोत्सर्जन करता है।

प्रकाश–संश्लेषण एवं वृद्धि के लिए पत्तियों में पहुंचने वाले पानी का एक प्रतिशत से भी कम प्रयोग किया जाता है। पानी की अधिकतर मात्रा पत्तियों से रंध्र द्वारा उड़ा दी जाती है। जल की यही क्षति वाष्पोत्सर्जन कहलाती है।

वाष्पोत्सर्जन (Transpiration)

वाष्पोत्सर्जन, पौधों द्वारा जल का वाष्प के रूप में परिवर्तन तथा इससे उत्पन्न क्षति है। मुख्यतः यह पत्तियों में पाए जाने वाले रंध्रों से होता है। वाष्पोत्सर्जन में पानी का वाष्प बनकर उड़ने के अलावा ऑक्सीजन एवं कार्बनडाइऑक्साइड का आदान–प्रदान भी पत्तियों में छोटे छिद्रों जिन्हें रंध्र कहते हैं, के द्वारा होता है। सामान्यतः ये रंध्र दिन में खुले रहते हैं और रात में बंद हो जाते हैं। रंध्र का बंद होना और खुलना रक्षक कोशिकाओं के स्फीति (Turgour) में बदलाव से होता है। प्रत्येक रक्षक कोशिका की आंतरिक भित्ति रंध्रछिद्र की तरफ काफी मोटी एवं तन्यतापूर्ण होती है। रंध्र को घेरे दो रक्षक कोशिकाओं में जब स्फीति दाब बढ़ता है तो पतली बाहरी भित्तियां बाहर की ओर उभरती है और अंदरूनी भित्ति को अर्धचंद्राकार स्थिति में आने को मजबूर करती है। रंध्र छिद्र के खुलने में रक्षक कोशिका की भित्तियों में उपस्थित सूक्ष्म सूत्राभ (माइक्रोफिबरिल) भी सहायता करता है। सेलुलोज

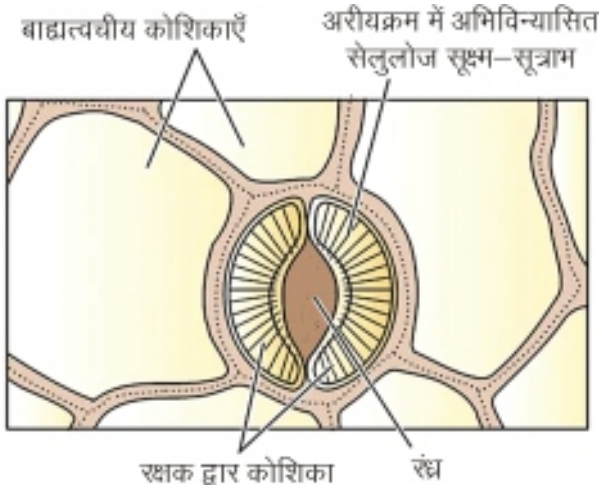

चित्र 14.6 : रक्षक कोशिका रंध्र के साथ

सूक्ष्मसूत्राभ का अभिविन्यास अरीय क्रम से होता है न कि अनुदैर्ध्य क्रम से, जो रंध्रछिद्र को आसानी से खोलता है (चित्र 14.6)। पानी की कमी होने पर जब रक्षक कोशिका की स्फीति समाप्त होती है (या जल तनाव खत्म होता है) तो तन्य आंतरिक भित्तियां पुनः अपनी मूल स्थिति में जाती हैं, तब रक्षक कोशिकाएं ढीली पड़ जाती हैं और रंध्र छिद्र बंद हो जाते हैं। सामान्य तौर पर एक पृष्ठधारी (प्रायः द्विबीजपत्री) पत्ती के निचली ओर अधिक संख्या में रंध्र होते हैं जबकि एक द्विपार्श्वीय (प्रायः एक बीजपत्री) पत्ती में रंध्रों की संख्या दोनों तरफ लगभग बराबर होती है।

वाष्पोत्सर्जन कई बाहरी कारकों जैसे कि ताप, प्रकाश, आर्द्रता एवं वायु की गति से प्रभावित होता है–वाष्पोत्सर्जन को प्रभावित करने वाले अन्य पादप कारक जैसे कि रंध्रों की संख्या एवं वितरण, खुले रंध्रों का प्रतिशत, पौधों में पानी की उपस्थिति तथा वितरण रचना आदि है।

जाइलम रस का वाष्पोत्सर्जित रूप से ऊपर चढ़ना मुख्य रूप से पानी के निम्न भौतिक गुणों पर निर्भर करता है :

ससंजन (Cohesion) – जल के अणुओं के बीच आपसी आकर्षण।

आसंजन (Adhesion) – जल अणुओं का ध्रुवीय सतह की ओर आकर्षण (जैसे कि वाहिकीय तत्वों की सतह)

पृष्ठ तनाव (Surface Tension) – पानी के अणु का द्रव अवस्था में गैसीय अवस्था की अपेक्षा एक दूसरे से अधिक आकर्षित होना।

पानी की ये विशिष्टताएं उसे उच्च तन्य सामर्थ्य प्रदान करती हैं, जैसे एक केशिकात्व खिंचाव शक्ति से प्रतिरोध की क्षमता तथा उच्च केशिकात्व अर्थात् किसी पतली नलिका में चढ़ने की क्षमता। पौधों में केशिकात्व को लघुव्यास वाले वाहिकीय, तत्व जैसे ट्रैकीड एवं वाहिका तत्व से भी सहायता मिलती है।

प्रकाश–संश्लेषण प्रक्रिया के लिए जल की आवश्यकता होती है। जाइलम वाहिकाएं पानी को जरूरत के अनुसार जड़ से पत्ती की शिराओं तक पहुंचाती हैं। चूंकि पानी की पतली परत कोशिकाओं के ऊपर लगातार होती है, अतः यह जाइलम से पत्ती तक पानी के अणुओं को खींचने में प्रतिफलित होता है। अधोरंध्री गुहिका तथा अंतरा कोशिका जगत के बजाय वातावरण में जलवाष्प की सांद्रता कम होती है, अतः पानी पास की हवा में विसरित हो जाता है और यह खिंचाव पैदा करता है (चित्र 14.7)। मापन से स्पष्ट होता है कि वाष्पोत्सर्जन द्वारा पैदा किया गया बल पानी को जाइलम के आकार के स्तंभ में 130 मीटर की ऊंचाई तक खींचने के लिए पर्याप्त होता है।

वाष्पोत्सर्जन के कई लाभ हैं जैसे –

– पौधों में अवशोषण एवं परिवहन के लिए वाष्पोत्सर्जन

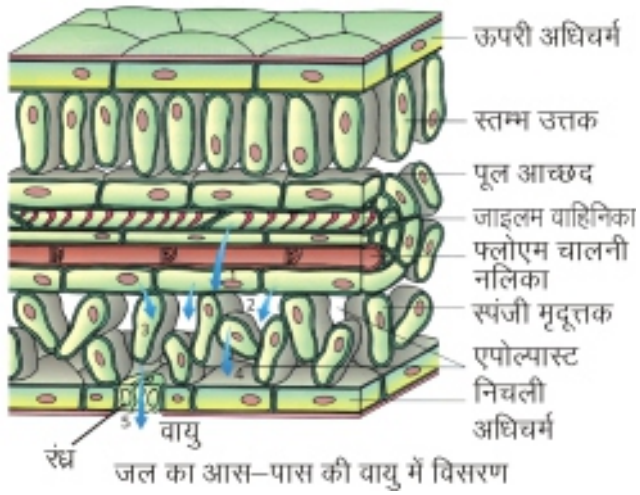

चित्र 14.7: जल का आस–पास की वायु में विसरण

खिंचाव पैदा करना।

– प्रकाश–संश्लेषण क्रिया के लिए पानी का संभरण।

– मृदा से प्राप्त खनिजों का पौधों के सभी अंगों तक परिवहन करना।

– पत्ती के सतह को वाष्पीकरण द्वारा 10 से 15 डिग्री तक ठण्डा रखना।

– कोशिकाओं को स्फीत रखते हुए पादपों के आकार एवं बनावट को नियंत्रित रखना।

एक सक्रिय प्रकाश–संश्लेषणरत पौधे को जल की अत्यंत ही आवश्यकता रहती है। प्रकाश–संश्लेषण में उपलब्ध जल सीमाकारी हो सकता है, जिसे वाष्पोत्सर्जन और प्रभावित करता है। वर्षावनों में आर्द्रता इसी जल–चक्र के कारण वातावरण में तथा पुनः मृदा में देखी गई।

सी–4 (C_4) प्रकाश–संश्लेषण तंत्र का क्रम–विकास, संभवतः कार्बनडाइऑक्साइड की उपलब्धता को बढ़ाने तथा पानी की क्षति को कम करने की रणनीति के तहत हुआ है। C_4 पौधे, C_3 की तुलना में कार्बन (शर्करा बनाने में) को सुस्थिर बनाने में दोगुना सक्षम होते हैं। C_4 पौधे, C_3 पौधे से समान मात्रा के कार्बनडाइऑक्साइड के यौगिकीरण हेतु आधी मात्रा में वाष्पोत्सर्जन द्वारा जल का नुकसान करते हैं।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. स्थलीय पौधे प्रतिदिन भारी मात्रा में पानी ग्रहण करते हैं, लेकिन पत्तियों से इनका अधिकतर भाग वाष्पोत्सर्जन द्वारा हवा में उड़ जाता है।
2. वायुमंडलीय दबाव पर विलेय या घोल का जल विभव ψ = विलेय विभव ψs होता है।
3. कोशिका का जल विभव, विलेय एवं दाब विभव दोनों ही से प्रभावित होता है। इन दोनों के बीच संबंध निम्न प्रकार से होता है: $\psi_W = \psi_S + \psi_P$
4. परासरण विशेष रूप से एक विभेदक अर्धपारगम्य झिल्लिका के आर–पार जल के विसरण के लिए संदर्भित किया जाता है।
5. जीवद्रव्यकुंचन में कोशिका से पानी बाहर गति करता तथा पादप कोशिका की कोशिका झिल्ली सिकुड़कर कोशिका भित्ति से अलग हो जाती है।
6. सामूहिक या थोक प्रवाह में पदार्थों का एक स्थान से दूसरे स्थान तक परिवहन, दो बिन्दुओं के बीच दाब की भिन्नता के परिणामस्वरूप होता है।
7. जल व खनिज, पादप की जड़ों की गहरी पर्तों में दो भिन्न पथों से गति करता है– 1. एपोप्लास्ट पथ 2. सिमप्लास्ट पथ।
8. जब पौधों में वाष्पीकरण कम होता है, तब अतिरिक्त पानी घास के तिनकों की नोक पर विशेष छिद्रों से स्त्रावित जल बूंदों के रूप में लटकने लगता है, इसे बिन्दुस्त्राव कहते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. जल विभव (ψ_W), विलेय विभव (ψ_S) एवं दाब विभव (ψ_P) मे संबंध बताइये–

(अ) $\frac{1}{\psi W} = \psi S + \psi P$ (ब) $\psi W = \psi S + \psi P$

(स) $\psi W = \frac{1}{\psi S + \psi P}$ (द) $\psi W = \psi S + \frac{1}{\psi P}$

2. यदि बाहरी विलयन कोशिका द्रव्य से कम तनुकृत है तो उसे कहेंगे–
   (अ) अल्पपरासरी (ब) अतिपरासरी
   (स) समपरासरी (द) उपरोक्त में से कोई नहीं
3. पादपों में जल का संचरण होता है–
   (अ) फ्लोएम द्वारा (ब) रन्ध्रों द्वारा
   (स) जाइलम द्वारा (द) भित्ति द्वारा
4. जाइलम रस का वाष्पोत्सर्जित रूप से ऊपर चढ़ना मुख्य रूप से निम्न पर निर्भर करता है–
   (अ) ससंजन बल (ब) आसंजन बल
   (स) पृष्ठ तनाव (द) उपरोक्त सभी

5. निम्न में से कौनसी क्रिया पादपों में जल संवहन में सहायक होती है–
   (अ) परासरण (ब) अन्तःशोषण
   (स) वाष्पोत्सर्जन (द) उपरोक्त सभी

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

1. जल विभव को परिभाषित कीजिये।
2. परासरण को परिभाषित कीजिये।
3. स्फीति दाब से आप क्या समझते हैं?
4. अतिपरासरी एवं अल्पपरासरी विलयन को उदाहरण द्वारा समझाइये।
5. जलीय दाब प्रवणता को समझाइये।
6. मूल दाब को परिभाषित कीजिये।
7. जाइलम रस का वाष्पोत्सर्जित रूप से ऊपर–चढ़ना मुख्य रूप से पानी के किन भौतिक गुणों पर निर्भर करता है, समझाइये।
8. जल विभव एवं विलेय विभव में संबंध लिखिये।
9. कोशिका में जीवद्रव्य कुंचन से आप क्या समझते है?
10. बिन्दुस्त्राव किसे कहते हैं?

लघुत्तरात्मक प्रश्न

1. जल विभव या जल अंतःशक्ति की व्याख्या कीजिये।
2. परासरण की क्रिया को उदाहरण द्वारा समझाइये।
3. पादप कोशिका में जीवद्रव्य कुंचन की क्रिया का सचित्र वर्णन कीजिये।
4. मूल दाब से आप क्या समझते हैं, पादपों में जल संवहन में यह किस प्रकार सहायक है?
5. वाष्पोत्सर्जन एवं प्रकाश–संश्लेषण का आपस में संबंध लिखिये।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. पादपों में जल अवशोषण की क्रिया को विस्तार से समझाइये।
2. पादप में जल का मूल से पत्ती की ओर गमन की क्रिया का वर्णन कीजिये।
3. जीवद्रव्य कुंचन एवं अंतःशोषण की क्रिया का सचित्र वर्णन कीजिये।

उत्तरमालाः 1 (ब) 2 (ब) 3 (स) 4 (द) 5 (द)

अध्याय – 15

प्रकाश संश्लेषण
(Photosynthesis)

सभी सजीवों को अपनी जैविक क्रियाएं सम्पन्न करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा भोज्य पदार्थों के ऑक्सीकरण द्वारा प्राप्त होती है। पादपों व जन्तुओं में ऊर्जा प्राप्त करने की विधि में अन्तर है, क्योंकि पादप सूर्य के प्रकाश का सीधे ही रासायनिक ऊर्जा में रूपान्तरण करने में सक्षम हैं, जबकि जन्तु प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अपनी जैविक क्रियाएं सम्पन्न करने के लिए आवश्यक ऊर्जा के लिए पादपों पर निर्भर रहते हैं। प्रकाश संश्लेषण को निम्न प्रकार से परिभाषित किया जा सकता है। हरे पौधों द्वारा सूर्य के प्रकाश व पर्णहरित की उपस्थिति में वायुमण्डल से प्राप्त CO_2 व मृदा द्वारा अवशोषित जल को कार्बोहाइड्रेट रूपी रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तन करना प्रकाश संश्लेषण कहलाता है। इसे निम्न रासायनिक समीकरण द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है–

$$6CO_2 + 12H_2O \xrightarrow[\text{पर्णहरित}]{\text{प्रकाश}} C_6H_{12}O_6 + 6H_2O + 6O_2\uparrow$$

प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में ऑक्सीजन उप उत्पाद (by product) के रूप में मुक्त होती है।

प्रकाश संश्लेषण का इतिहास
(History of photosynthesis)

पौधों द्वारा अपना भोजन स्वयं बनाने की क्षमता का ज्ञान होने से जीव–विज्ञान के क्षेत्र में एक रोचक एवं महत्वपूर्ण शोध का आरम्भ हुआ। प्रकाश संश्लेषण के क्षेत्र में होने वाली महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ निम्न हैं–

ह्यूमसवाद – अरस्तु व उनके विद्यार्थी थियोफ्रैस्टस ने (320 BC) बताया कि पौधों का वजन मृदा से आवश्यक तत्वों के अवशोषण के कारण बढ़ता है।

वॉन हेलमोण्ट (Von Helmont; 1577-1644) **का प्रयोग** – वॉन हेलमोण्ट ने 5 पौण्ड वजनी विलो (Willow) के पौधे को एक बड़े गमले में लगाया जिसमें 200 पौण्ड शुष्क मृदा भरी हुई थी, केवल प्ररोह के लिए एक छिद्र छोड़कर गमले को अच्छी तरह ढक दिया। इस प्रकार स्थापित पौधे को केवल वर्षा का जल (आसुत जल) दिया जाता रहा। पाँच वर्ष पश्चात् उन्होंने पाया कि पौधे का वजन 169 पौण्ड 3 औंस हो गया व गमले की मिट्टी में मात्र 2 औंस की कमी पाई गई। इस प्रयोग से यह निष्कर्ष निकाला गया कि पौधों को भोजन केवल जल से ही प्राप्त होता है न की मृदा से। वॉन हेलमोण्ट की यह अवधारणा केवल आंशिक रूप से ही सत्य थी।

स्टीफन हेल्स (Stephen Hales, 1727) जिन्हें पादप कार्यिकी का जनक कहा जाता है, ने सन् 1727 में एक पुस्तक प्रकाशित की जिसमें पादपों में पोषण के बारे में यह बताया कि पादप अपने पोषण का कुछ अंश वायु से प्राप्त करते हैं, तथा इसके लिए उन्हें प्रकाश की आवश्यकता होती है। सम्भवतः यह प्रकाश संश्लेषण के बारे में प्रथम लिखित प्रमाण है।

जोसेफ प्रिस्टले (Joseph Priestley, 1772) ने वास्तव में प्रकाश संश्लेषण की खोज की नींव रखी। उन्होंने यह बताया कि प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में गैसों का आदान–प्रदान होता है। उन्होंने अपने प्रयोगों के आधार पर यह बताने का प्रयास किया कि पौधे जन्तुओं के द्वारा दूषित वायु को शुद्ध करते हैं। प्रिस्टले ने बेलजार में मोमबत्ती जलाने से अशुद्ध हुई वायु को पोदीने के पौधे द्वारा पुनः शुद्ध कर जन्तुओं के श्वसन योग्य बनाया।

जॉन इन्जन हाउज (Jan Ingen Housz) ने सन् 1779 में सर्वप्रथम प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में हरे वर्णक व प्रकाश का महत्व बताया तथा जल निमग्न पादप का उपयोग कर ऑक्सीजन बुलबुलों का निकास दर्शाया।

जीन सेनेबियर (Jean Senebier) ने सन् 1782 में सर्वप्रथम यह बताया कि पादपों में वायु को शुद्ध करने की क्षमता CO_2 की उपस्थिति पर निर्भर करती है।

पादपों में पाये जाने वाले हरे रंग के वर्णक को क्लोरोफिल नाम सन् 1818 में **पैलेटियर** एवं **कैवेन्टऊ** (Pelletier and Caventou) द्वारा दिया गया।

जुलियस रॉबर्ट मेयर (Julius Robert Mayer) ने सन् 1845 में यह बताया कि हरे पादप प्रकाश ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में बदल देते हैं। इस प्रक्रिया को उन्होंने निम्न समीकरण द्वारा व्यक्त किया –

[illegible] ⟶ [illegible] ↑

इसी समय लीबिग (Liebig) ने यह बताया कि प्रकाश संश्लेषण में कार्बनिक पदार्थों का निर्माण CO_2 से होता है व इस कार्य में जल (H_2O) की आवश्यकता होती है।

एफ. ब्लैकमेन (F. Blackman) ने सन् 1905 में सर्वप्रथम यह बताया कि प्रकाश संश्लेषण में केवल प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया (Photochemical reaction) ही नहीं होती बल्कि जैव रासायनिक अभिक्रिया (Biochemical reaction) भी होती है, जिसके लिए प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती, इस कारण इस प्रक्रिया को अप्रकाशिक अभिक्रिया (Dark reaction) भी कहा जाता है। प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया के दो चरणों में होने के प्रमाण सबसे पहले ब्लैकमेन ने दिये थे, इस कारण इसे ब्लैकमेन अभिक्रिया भी कहा जाता है।

रॉबर्ट हिल (Robert Hill) ने सन् 1937 में प्रकाश संश्लेषण में होने वाली प्रकाशिक व अप्रकाशिक प्रक्रिया में होने वाली अभिक्रियाओं की क्रिया विधियों का विस्तृत अध्ययन कर सबसे पहले यह बताया कि प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में ऑक्सीजन जल द्वारा मुक्त होती है। उन्होंने अपने प्रयोग पृथक्कृत क्लोरोप्लास्ट, प्रकाश, जल एवं उचित हाइड्रोजन ग्राही की उपस्थिति एवं CO_2 की अनुपस्थिति में किये एवं यह बताया कि O_2 की निकासी जल द्वारा होती है।

रूबेन एवं सहयोगियों (Ruben et al.) ने सन् 1941 में रेडियो चिन्हित (radio labelled) ऑक्सीजन (^{18}O) का उपयोग कर प्रकाश संश्लेषण में ऑक्सीजन की मुक्ति जल से ही होती है, की पुष्टि की।

मेल्विन केल्विन (Melvin Calvin) एवं साथियों ने 1954 में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में कार्बन डाइऑक्साइड द्वारा कार्बोहाइड्रेट बनने की सम्पूर्ण प्रक्रिया को क्रमबद्ध रासायनिक अभिक्रियाओं के रूप में समझाया जिनके नाम पर इस चक्र को केल्विन–बैन्सन चक्र या C_3 चक्र (Calvin-Benson cycle or C_3 cycle) कहा जाता है। इस कार्य के लिए उनको 1961 में नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। इसी वर्ष आर्नन ने प्रकाश फॉस्फोरिलीकरण की खोज की। हैच तथा स्लैक (Hatch and Slack) ने सन् 1967 में कुछ उष्णकटिबन्धीय पादपों में C_4 चक्र का विस्तृत अध्ययन किया।

मिशेल (Mitchell) ने फॉस्फोरिलीकरण के रसायनपरासरी सिद्धान्त (Chemiosmotic theory) का प्रतिपादन किया। इस कार्य के लिए उन्हें सन् 1978 में नोबेल पुरस्कार द्वारा सम्मानित किया गया।

प्रकाश संश्लेषी वर्णक तथा स्थल
(Photosynthetic pigments and site)

सभी हरे पौधे प्रकाश ऊर्जा का रूपान्तरण रासायनिक ऊर्जा में करते हैं। इस कार्य के लिए पौधों में विशेष प्रकार के वर्णक पाये जाते हैं। ये मुख्य रूप से तीन प्रकार के होते हैं– (i) पर्णहरित (Chlorophylls), (ii) कैरोटिनॉइड्स (Carotenoids) तथा (iii) फाइकोबिलिन्स (Phycobilins)। इनमें क्लोरोफिल्स मुख्य वर्णक की तरह कार्य करते हैं, जबकि कैरोटिनॉइड्स व फाइकोबिलिन्स प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में सहायक वर्णकों की तरह कार्य करते हैं। ये सभी वर्णक पादप कोशिका में पाये जाने वाले विशेष कोशिकांग में पाये जाते हैं, जिसे हरितलवक (Chloroplast) कहते हैं। प्रकाश संश्लेषण की क्रिया क्लोरोप्लास्ट में सम्पन्न होती है (चित्र 15.1)।

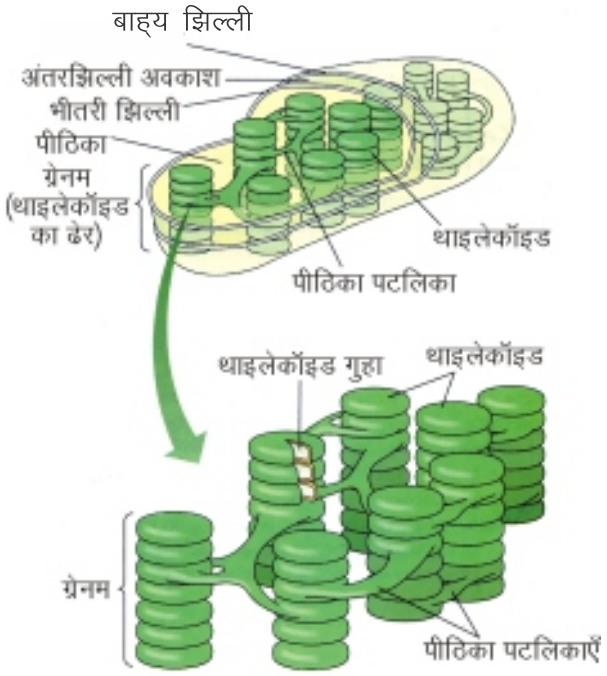

चित्र 15.1 : क्लोरोप्लास्ट की संरचना (क) आरेख (ख) आन्तरिक त्रिविम दृश्य

क्लोरोप्लास्ट की आधात्री (Stroma) में लिपिड व प्रोटीन्स द्वारा निर्मित इकाई कला से बना नलिकीय (Tubular) तंत्र होता है जिसे थाइलेकॉइड कहते हैं, कई थाइलेकॉइड एक के ऊपर

एक व्यवस्थित होकर विशेष प्रकार की रचना का निर्माण करते हैं, जिन्हें ग्रेना कहते हैं (बहुवचन–grana; एकवचन–granum)।

इन्हीं थाइलेकॉइड्स में प्रकाश संश्लेषण से सम्बन्धित प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाओं के लिए आवश्यक पदार्थ विद्यमान रहते हैं। थाइलेकॉइड झिल्ली में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया के आरम्भन के लिए आवश्यक प्रकाश ऊर्जा को ग्रहण करने वाले वर्णक उपस्थित होते हैं जिनमें क्लोरोफिल प्रमुख हैं। ये वर्णक दृश्य स्पेक्ट्रम में बैंगनी, नीले व लाल रंग के क्षेत्र में अवशोषण करते हैं जो स्पेक्ट्रम के 400 nm से 700 nm के बीच का भाग है अतः इसे प्रकाश संश्लेषी सक्रिय विकिरण (Photosynthetically active radiation, PAR) भी कहा जाता है। क्लोरोफिल्स द्वारा हरे रंग के प्रकाश का परावर्तन हो जाता है जिसके कारण पौधों की पत्तियाँ हरी दिखाई देती है।

1. पर्णहरित (Chlorophylls) – पर्णहरित प्रकाश संश्लेषण में प्रयुक्त होने वाले मुख्य वर्णक हैं। यह मुख्य रूप से लाल, नीले व बैंगनी प्रकाश का अवशोषण करते हैं। लगभग सात प्रकार के क्लोरोफिल वर्णक पाये जाते हैं (Chl-a, Chl-b, Chl-c, Chl-d, Chl-e, Chlorobium chlorophyll and Bacteriochlorophyll)। अंतिम दो प्रकार प्रकाश संश्लेषी जीवाणुओं में पाये जाते हैं। पादपों में Chl-a, मुख्य वर्णक है जो प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में प्रकाश ऊर्जा को ग्रहण करता है। यह सभी यूकेरियोटिक प्रकाश संश्लेषी जीवों में पाया जाता है। क्लोरोफिल–b सहायक वर्णक की तरह कार्य करता है। यह केवल उच्च वर्ग के पौधों एवं हरे शैवालों में पाया जाता है। क्लोरोफिल–b पादपों में सम्पूर्ण क्लोरोफिल के एक चौथाई भाग के बराबर होता है। प्रकाश संश्लेषण में क्लोरोफिल–b भिन्न–भिन्न तरंगदैर्ध्य के प्रकाश को अवशोषित कर उत्तेजित हो जाता है तथा इस ऊर्जा को Chl-a, के अणुओं में स्थानान्तरित कर देता है जो अभिक्रिया केन्द्रों (Reaction centre) की तरह कार्य करते हैं। जहाँ प्रकाश ऊर्जा का वैद्युत आवेशों के पृथक्करण के कारण वैद्युत ऊर्जा में रूपान्तरण हो जाता है, व ये e^- मुक्त करते हैं।

संरचना – क्लोरोफिल एक ध्रुवीय वृहत अणु है। जिसमें एक सुविकसित पोरफाइरिन वलय (Porphyrin ring) का बना शीर्ष व फाइटोल (phytol) शृंखला द्वारा निर्मित पुच्छ (Tail) पायी जाती है। क्लोरोफिल-a का अणु सूत्र $C_{55}H_{72}O_5N_4Mg$ है। पोरफाइरिन वलय एक चपटी वर्गाकार रचना है जिसमें चार पाइरोल वलय पाई जाती है। प्रत्येक पाइरोल वलय में एक नाइट्रोजन परमाणु पाया जाता है। चारों पाइरोल वलय के केन्द्र में मैग्नीशियम (Mg) अणु पाया जाता है। यह पोरफाइरिन शीर्ष एस्टर बंध द्वारा फाइटोल शृंखला से जुड़ा रहता है। क्लोरोफिल-a में पोरफाइरिन शीर्ष की द्वितीय पाइरोल रिंग में तृतीय कार्बन पर मिथाइल ($-CH_3$) समूह व क्लोरोफिल-b में इसी स्थान पर एल्डिहाइड ($-CHO$) समूह पाया जाता है (चित्र 15.2) क्लोरोफिल अणु का शीर्ष जल अनुरागी (Hydrophobic) होता है जो इसको ध्रुवीय प्रकृति प्रदान करता है।

क्लोरोफिल-a एवं b के अलावा अन्य क्लोरोफिल c, d एवं e होते हैं जो केवल शैवालों में पाये जाते हैं।

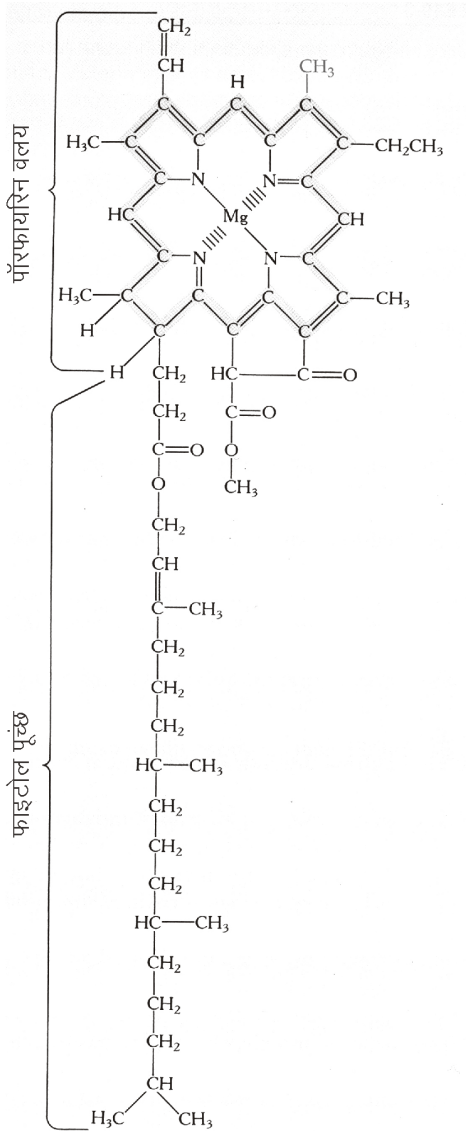

चित्र 15.2 : क्लोरोफिल अणु की रासायनिक संरचना

2. कैरोटिनॉइड्स (Carotenoids) – प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में क्लोरोफिल्स के अतिरिक्त प्रयुक्त होने वाले वर्णक कैरोटिनॉइड्स को वैकेन्रोडेर (Wackenroder) ने गाजर में खोजा था जिसे कैरोटीन (Carotene) के नाम से जाना गया। यह हाइड्रोजन व कार्बन से मिलकर बना होता है। दूसरे कैरोटिनॉइड्स जिनमें हाइड्रोजन कार्बन के अलावा ऑक्सीजन भी पाई जाती है

जैन्थोफिल्स (Xanthophyll) कहलाते हैं। ये प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में प्रयुक्त होने वाले सहायक वर्णक हैं। जिस प्रकाशिक ऊर्जा को क्लोरोफिल्स अवशोषित नहीं कर सकते वह सहायक वर्णकों द्वारा अवशोषित कर क्लोरोफिल्स को स्थानान्तरित की जाती है। कैरोटीन एवं जेन्थोफिल कई प्रकार के होते हैं। कैरोटीन जैसे β–कैरोटीन तथा जैन्थोफिल्स जैसे ल्यूटिन सभी हरे पौधों में पाये जाते हैं।

3. फाइकोबिलिन्स (Phycobilins) – ये दो तरह के वर्णक हैं। लाल रंग के वर्णक फाइकोइरीथ्रिन व नीले रंग के वर्णक फाइकोसायनिन कहलाते हैं। ये लाल व नील हरित शैवालों में सहायक वर्णक होते हैं।

प्रकाश संश्लेषण की क्रिया–विधि (Mechanism of Photosynthesis)

अब तक हुए शोधों के आधार पर प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया को निम्न चरणों में समझा जा सकता है –

1. क्लोरोफिल्स व सहायक वर्णकों द्वारा अवशोषित प्रकाश ऊर्जा का उपयोग जल के प्रकाशिक अपघटन (Photolysis) में होता है। इस प्रक्रिया में O_2, H^+ व e^- विमुक्त होते हैं।
2. इन इलेक्ट्रोन्स का प्रवाह प्रकाश तंत्रों द्वारा चरणों में पूर्ण होता है जिसमें ATP व $NADPH+H^+$ के रूप में ऊर्जा का संग्रह होता है।
3. इस प्रकार बने उच्च ऊर्जा युक्त पदार्थों का उपयोग कार्बन डाइऑक्साइड के अपचयन में होता है जिसके परिणामस्वरूप कार्बोहाइड्रेट्स का निर्माण होता है।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया एक ऑक्सीकरण–अपचयन प्रक्रिया है जिसमें जल का ऑक्सीकरण O_2 में तथा कार्बन डाइऑक्साइड का अपचयन कार्बोहाइड्रेट्स में होता है। इसे निम्न रासायनिक समीकरण द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है–

$$6CO_2 + 12H_2O \xrightarrow[\text{पर्णहरित}]{\text{प्रकाश}} C_6H_{12}O_6 + 6H_2O + 6O_2\uparrow$$

प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में दो प्रावस्थाएं (Phases) पाई जाती है जिन्हें प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया (Photochemical reaction) व अप्रकाशिक अभिक्रिया (Dark reaction) अथवा ब्लैकमेन अभिक्रिया कहा जाता है। इनमें से प्रथम प्रक्रिया में प्रकाश की आवश्यकता होती है जिससे इस प्रकाश ऊर्जा का उपयोग सीधे ही ऊर्जा वाहक अणु बनाने में होता है। ये ऊर्जा–वाहक अणु अप्रकाशिक अभिक्रिया में ऊर्जा स्रोत के रूप में प्रयुक्त होते हैं अप्रकाशिक अभिक्रिया, प्रकाशिक अभिक्रिया में बने उत्पादों पर निर्भर करती है क्योंकि इन्हीं उत्पादों (रासायनिक ऊर्जा) का उपयोग कार्बोहाइड्रेट्स में C-C सहसंयोजक बंध बनाने में होता है। प्रकाश संश्लेषण में होने वाली प्रकाशिक व अप्रकाशिक अभिक्रियाएं क्रमशः क्लोरोप्लास्ट के ग्रेना तथा स्ट्रोमा भाग में सम्पन्न होती है (चित्र 15.3)।

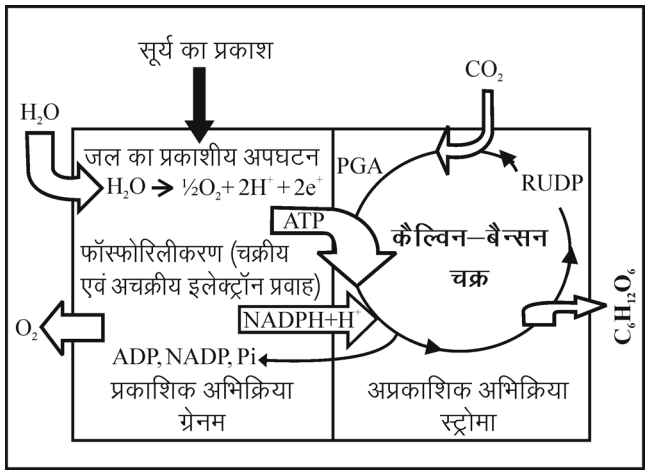

चित्र 15.3 : प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया में सम्पन्न होने वाली प्रकाशिक व अप्रकाशिक अभिक्रियाएं

प्रकाश की प्रकृति – सामान्यतः प्रकाश विद्युत चुम्बकीय तरंगों का रूप है। दृश्य स्पेक्ट्रम वैद्युत चुम्बकीय तरंगों का एक छोटा–सा भाग है। जिसमें पायी जाने वाली तरंगों का तरंगदैर्ध्य 390–760 नेनो मीटर होता है। इस दृश्य स्पेक्ट्रम में बैंगनी रंग की प्रकाश तरंगों की तरंगदैर्ध्य सबसे कम (390–430 नेनोमीटर) व लाल रंग की प्रकाश तरंगों की तरंगदैर्ध्य सबसे से अधिक (660–760 नेनोमीटर) होती है। लाल रंग की तरंगदैर्ध्य से अधिक तरंगदैर्ध्य वाली विकिरण अवरक्त (infrared) विकिरण कहलाती है। जबकि वह विकिरण जिसकी तरंगदैर्ध्य बैंगनी रंग की किरणों के तरंगदैर्ध्य से कम होती है, पराबैंगनी विकिरण कहलाती है। दृश्य स्पेक्ट्रम की सभी तरंगे संयुक्त रूप से सफेद प्रकाश के रूप में दिखाई देती हैं। प्रकाश की किरणों में उच्च ऊर्जा वाले कण पाये जाते हैं जिन्हें फोटोन (Photon) कहते हैं। इन्हीं कणों की ऊर्जा से प्रकाश संश्लेषण की क्रिया होती है। प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में CO_2 के एक अणु के अपचयन के लिए लगभग 8–10 फोटोन की आवश्यकता होती है, जो प्रकाश संश्लेषण की क्वान्टम आवश्यकता कहलाती है। मुक्त होने वाले O_2 के अणुओं की संख्या तथा अवशोषित होने वाले प्रत्येक क्वान्टम का अनुपात क्वान्टम उत्पादन कहलाता है। लाल प्रकाश की अपेक्षा बैंगनी प्रकाश में होने वाले प्रकाश संश्लेषण में ऊर्जा का ह्रास अधिक होता है। अतः इस क्रिया में क्वान्टम आवश्यकता वास्तविक से अधिक होती है।

(i) **प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया** (Photochemical reaction/Light reaction) – प्रकाश संश्लेषण के इतिहास में यह

बताया जा चुका है कि प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में मुक्त होने वाली O_2 जल के प्रकाशिक अपघटन द्वारा वियोजित होती है। प्रकाश संश्लेषण में सम्पन्न होने वाली प्रकाशिक अभिक्रिया में निम्न रासायनिक घटनाएं होती हैं –

(क) प्रकाश का अवशोषण व क्लोरोफिल अणु का उत्तेजित होना – प्रकाश के निश्चित फोटोन का अवशोषण कर क्लोरोफिल अणु कुछ समय के लिए उत्तेजित अवस्था में आ जाता है।

क्लोरोफिल (सामान्य) + फोटोन ⟶ क्लोरोफिल (उत्तेजित अवस्था)

(ख) जल का प्रकाशिक अपघटन व ऑक्सीजन का निकास – क्लोरोफिल द्वारा अवशोषित की गई प्रकाश ऊर्जा का उपयोग जल के प्रकाशिक अपघटन में होता है। जिससे O_2 का वियोजन होता है, जो श्वसन क्रिया में प्रयुक्त होती है तथा बची हुई O_2 वायुमण्डल में मुक्त हो जाती है। O_2 के एक अणु के निकलने के लिए पानी के दो अणुओं का प्रकाशिक अपघटन होता है। पानी के प्रकाशिक अपघटन की क्रिया निम्न है–

$$2H_2O \xrightarrow{\text{प्रकाश}} 4H^+ + 4e^- + O_2$$

(ग) NADPH का निर्माण – जल के प्रकाशिक अपघटन में मुक्त होने वाली हाइड्रोजन, $NADP^+$ (हाइड्रोजन ग्राही) को अपचयित कर $NADPH + H^+$ का निर्माण करती है।

पानी के दो अणुओं के प्रकाशिक अपघटन के पश्चात् निकलने वाले $4H^+$ से $2NADPH + 2H^+$ बनते हैं, जो कि CO_2 के एक अणु के अपचयन के लिए आवश्यक होते हैं। इस क्रिया में $4e^-$ भी आवश्यक होते हैं जो प्रथम प्रकाश तंत्र से प्राप्त होते हैं–

$$2NADP^+ + 4H + 4e^- \longrightarrow 2NADPH + 2H^+$$

CO_2 के 6 अणुओं के अपचयन के लिए $12NADPH + 12H^+$ आवश्यक होते हैं जो कि पानी के 12 अणुओं के अपघटन के पश्चात् प्राप्त होते हैं।

(घ) प्रकाशिक फॉस्फोरिलीकरण – प्रकाश ऊर्जा द्वारा उत्तेजित क्लोरोफिल से मुक्त होने वाली ऊर्जा का उपयोग ATP संश्लेषण में होता है जिसे प्रकाशिक फॉस्फोरिलीकरण कहते हैं। इस क्रिया का अध्ययन आप इसी अध्याय में आगे करेंगे।

इमर्सन प्रभाव (Emerson effect) – इमर्सन एवं सहयोगियों ने प्रकाश की विभिन्न तरंगदैर्ध्य (Wave lengths) में प्रकाश संश्लेषण की दर का मापन करते हुए यह पता लगाया कि एकवर्णीय स्पैक्ट्रम के लाल क्षेत्र में जहाँ तरंगदैर्ध्य 680 nm (नेनोमीटर) से अधिक होती है, प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया बहुत कम हो जाती है। इसे **"लाल पतन"** (Red drop) कहते हैं।

उन्होंने यह भी देखा कि 680 nm से अधिक तरंगदैर्ध्य वाले प्रकाश के साथ 680 nm से कम तरंगदैर्ध्य वाला प्रकाश भी अंतराली रूप से देने पर, प्रकाश संश्लेषण की दर बढ़ जाती है और ऑक्सीजन अधिक मात्रा में निकलने लगती है।

इससे यह सिद्ध होता है कि दो अलग प्रकार के मिश्रित तरंगदैर्ध्य (680 nm से अधिक व कम) में होने वाले प्रकाश संश्लेषण की दर, दोनों प्रकार के तरंगदैर्ध्य वाले प्रकाश में होने वाली अलग–अलग प्रकाश संश्लेषण के योग से अधिक होती है। इस घटना को **इमर्सन वृद्धिकरण प्रभाव** (Emerson enhancement effect) कहते हैं।

उपरोक्त प्रयोगों के आधार पर इमर्सन इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि पादपों में प्रकाश संश्लेषण करने के लिये वर्णकों के कम से कम दो समूह पाये जाते हैं। एक वह जो उच्च या बड़ी तरंगदैर्ध्य के प्रकाश का अवशोषण करते हैं तथा दूसरे वह जो निम्न या छोटी तरंगदैर्ध्य के प्रकाश का अवशोषण करते हैं। इन वर्णक समूहों को क्रमशः **प्रकाश तंत्र**-I (Photosystem-I) एवं **प्रकाश तंत्र**-II (Photosystem-II) कहा जाता है।

थायलेकॉइड में क्लोरोफिल व दूसरे वर्णकों के विन्यास को प्रकाश तंत्र कहा जाता है। प्रत्येक प्रकाश तंत्र में 300 से 400 वर्णक अणु पाये जाते हैं। प्रत्येक प्रकाश तंत्र में एक अभिक्रिया केन्द्र (Reaction centre) तथा इसको चारों तरफ से घेरे हुए सहायक वर्णक पाये जाते हैं। ये सहायक वर्णक प्रकाशिक ऊर्जा को अवशोषित करके अभिक्रिया केन्द्र को दे देते हैं। इन अणुओं को एन्टीना अणु (Antenna molecules) कहते हैं। प्रकाश तंत्र की क्रिया विधि चित्र 15.4 में समझाई गई है।

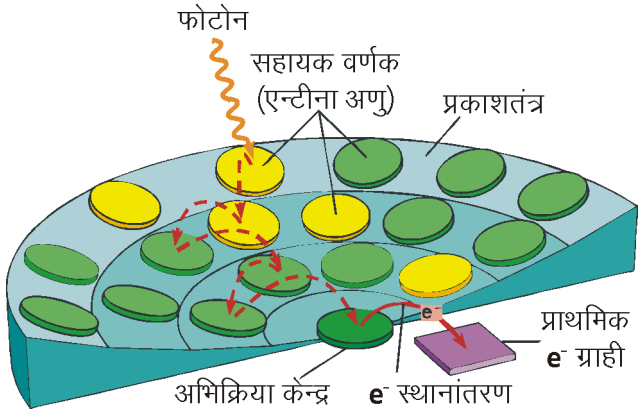

चित्र 15.4 : प्रकाश तंत्र की क्रिया–विधि

प्रकाश तंत्र-I– प्रकाश तंत्र-I में फोटोन की ऊर्जा का अवशोषण क्लोरोफिल-a के विभिन्न अणु (Chl_{660}, Chl_{670}, Chl_{680}, एवं Chl_{700}) तथा कैरोटिनॉइड करते हैं। जो भिन्न–भिन्न तरंगदैर्ध्य वाली तरंगों का अवशोषण कर अन्त में विशेष प्रकार के क्लोरोफिल-a 700 (P_{700}) अणु जो अभिक्रिया केन्द्र की तरह कार्य करता है, को

स्थानान्तरित कर देते हैं। अभिक्रिया केन्द्र में प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया के कारण उच्च ऊर्जा वाले इलेक्ट्रॉन्स का उत्सर्जन होता है। यह प्रकाश तंत्र चक्रीय व अचक्रीय दोनों प्रकार के फोस्फोरिलीकरण में भाग लेता है।

प्रकाश तंत्र-I की कार्य विधि (Mechanism of photosystem-I) – इस प्रकाश तंत्र में सूर्य के प्रकाश के फोटोन क्लोरोफिल-a [P_{700} (pigment-700)] से टकराते हैं तथा फोटोन की क्वान्टम ऊर्जा का अवशोषण कर क्लोरोफिल से 2 इलेक्ट्रॉन उत्सर्जित होते हैं। जिससे क्लोरोफिल अणु ऑक्सीकृत अवस्था में आ जाता है। ये उत्सर्जित इलेक्ट्रॉन एक आयरन सल्फर प्रोटीन [A(FeS)] द्वारा ग्रहण कर लिये जाते हैं जिससे A अपचयित हो जाता है। पुनः ये इलेक्ट्रॉन A से फेरीडॉक्सिन Fd द्वारा ग्रहण कर लिए जाते हैं। अपचयित फेरीडॉक्सिन से इलेक्ट्रॉन $NADP^+$ के द्वारा ग्रहण किये जाते हैं, जो अपचयित होकर $NADPH + H^+$ अवस्था में आ जाता है। $NADPH + H^+$ एक शक्तिशाली अपचयनकारी (Strong reductant) है। इस प्रकार बनी $NADPH + H^+$ अप्रकाशिक अभिक्रिया में CO_2 के अपचयन में काम आती है। इसे कोशिका की स्वांगीकारी या अपचयन शक्ति (Assimilatory or Reducing power) भी कहा जाता है।

प्रकाश तंत्र-II – प्रकाश तंत्र-II में फोटोन ऊर्जा का अवशोषण क्लोरोफिल-a 673, क्लोरोफिल-b व फाइकोबिलिन्स करते हैं। इस वर्णक तंत्र में भी इन अणुओं द्वारा भिन्न–भिन्न तरंगदैर्ध्य की प्रकाश तरंग का अवशोषण कर अभिक्रिया केन्द्र (P_{680}) को स्थानान्तरण कर दिया जाता है। इस प्रकाश तंत्र में Chl_a 673, Chl_b 650, तथा जैन्थोफिल्स एन्टीना का कार्य करते हैं। इस प्रकाश तंत्र में प्रकाश तंत्र I की तुलना में कम तरंगदैर्ध्य वाली फोटोन ऊर्जा का अवशोषण होता है। इस प्रकाश तंत्र का उपयोग केवल अचक्रीय प्रकाश फोस्फोरिलीकरण में होता है।

प्रकाश तंत्र-II की कार्य विधि (Mechanism of photosystem-II)- इस प्रकाश तंत्र में जल का प्रकाशिक अपघटन होता है। प्रकाश तंत्र-II में इलेक्ट्रॉन स्थानान्तरण शृंखला की शुरूआत इस प्रकाश तंत्र के वर्णकों द्वारा विशेष तरंगदैर्ध्य वाली प्रकाश तरंगों के अवशोषण से होती है। जब क्लोरोफिल प्रकाश तरंगों का अवशोषण करता है तो यह उत्तेजित अवस्था में आ जाता है, जिससे इसमें से इलेक्ट्रॉन मुक्त होते हैं। यह मुक्त होने वाले इलेक्ट्रॉन्स, ग्राही अणु फीयोफाइटिन (Pheophytin) द्वारा ग्रहण कर लिये जाते हैं। क्लोरोफिल अणु अब प्रबल ऑक्सीकारक की तरह कार्य करता है। जिससे जल के अणु का अपघटन हो जाता है एवं O_2 मुक्त होती है। यह प्रक्रिया जल का प्रकाशिक अपघटन (Photolysis of water) कहलाती है। इसमें मैंग्नीज आयन महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं व क्लोराइड तथा कैल्शियम आयन भी योगदान करते हैं। जल के अपघटन द्वारा मुक्त होने वाले इलेक्ट्रॉन P_{680} द्वारा ग्रहण कर लिये जाते हैं। P_{680} द्वारा यौगिक (Pheophytin) को स्थानान्तरित इलेक्ट्रॉन्स प्लास्टोक्वीनोंन (PQ) $\rightarrow$ साइटोक्रोम b_6 एवं f होते हुए प्लास्टोसायनिन (PC) द्वारा ग्रहण कर लिये जाते हैं जिससे यह अपचयित हो जाता है। अपचयित प्लास्टोसायनिन से ये इलेक्ट्रॉन्स प्रकाश तंत्र-II के P_{700} अणु द्वारा ग्रहण कर लिये जाते हैं (P_{700} इलेक्ट्रॉन ग्रहण उस अवस्था में ही करता है जब उसके इलेक्ट्रॉन प्रकाश फोटोन द्वारा उत्सर्जित किये जा चुके हों)। इलेक्ट्रॉन शृंखला में प्लास्टोसायनिन प्रकाश तंत्र-II व प्रकाश तंत्र-I के बीच योजक कड़ी का कार्य करता है।

$$H_2O \xrightarrow[\text{क्लोरोफिल}]{\text{फोटोन}} \frac{1}{2}O_2 + 2H^+ + 2e^-$$

इलेक्ट्रॉन स्थानान्तरण शृंखला (Electron transfer chain) – प्रकाश संश्लेषण में प्रकाश द्वारा क्लोरोफिल अणुओं से मुक्त हुए इलेक्ट्रॉनों से होने वाली अभिक्रियाओं को इलेक्ट्रॉन स्थानान्तरण शृंखला कहा जाता है। जिसे सबसे पहले सन् 1939 में राबर्ट हिल (Robert Hill) ने बताया था।

प्रकाश फॉस्फोरिलीकरण (Photophosphorylation) – पादप क्लोरोप्लास्ट में सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में ADP से ATP के निर्माण की प्रक्रिया प्रकाश फॉस्फोरिलीकरण कहलाती है। इस क्रिया को ऑर्नन व उनके सहयोगियों ने खोजा था। प्रकाश फॉस्फोरिलीकरण क्रिया दो प्रकार से होती है–

1. चक्रीय फॉस्फोरिलीकरण (Cyclic photophosphorylation)– प्रकाश तंत्र-I में P_{700} से उत्सर्जित इलेक्ट्रॉन्स A $\rightarrow$ Fd $\rightarrow$ $Cytb_6$ / f $\rightarrow$ प्लास्टोसायनिन से होते हुए ये P_{700} अणु में वापस लौट आते हैं। इस प्रकार वापस लौटते इलेक्ट्रॉन्स प्लास्टोक्वीनोन (plastoquinone, PQ) व Cyt-f के मध्य ADP से ATP का निर्माण करते हैं। क्योंकि इस क्रिया में इलेक्ट्रॉन P_{700} से उत्सर्जित होकर पुनः P_{700} में चक्रीय क्रिया द्वारा पहुँच जाते हैं तथा ATP का निर्माण करते हैं, इस कारण इसे चक्रीय फॉस्फोरिलीकरण कहते हैं (चित्र 15.5)।

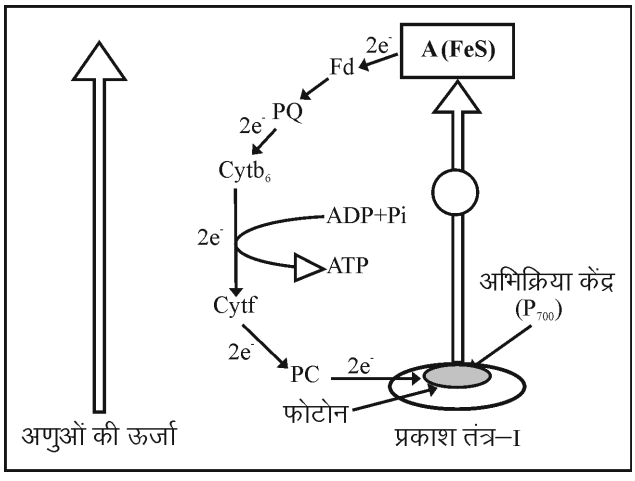

चित्र 15.5 : प्रकाशिक अभिक्रिया में सम्पन्न होने वाला चक्रीय फॉस्फोरिलीकरण

2. अचक्रीय प्रकाश फॉस्फारिलीकरण (Noncyclic photosphorylation) – यह फॉस्फोरिलीकरण दोनों प्रकाश तंत्रों PS I एवं PS II के द्वारा होता है। इस क्रिया में P_{680} द्वारा उत्सर्जित इलेक्ट्रॉन्स पुनः P_{680} में नहीं आकर एक रेखीय पथ द्वारा Pheo → प्लास्टोक्वीनोन → साइटोक्रोम-b_6.f → प्लास्टोसायनिन से होते हुए P_{700} में पहुँच जाते हैं। P_{680} से उत्सर्जित इलेक्ट्रॉन्स पुनः P_{680} में नहीं पहुँचते इस कारण यह प्रक्रिया अचक्रीय फॉस्फोरिलीकरण कहलाती है। इसमें PS II के इलेक्ट्रॉन्स के द्वारा ATP एवं PS I से निकले हुए इलेक्ट्रॉन्स के द्वारा $NADPH+H^+$ बनता है।

चक्रीय एवं अचक्रीय प्रकार के फॉस्फोरिलीकरण में महत्त्वपूर्ण अन्तर सारिणी 15.1 में दिये गये हैं।

(ii) **अप्रकाशिक / प्रकाशहीन अभिक्रिया** (Dark reaction/ Light independent reaction) – प्रकाश संश्लेषण में सम्पन्न होने वाली यह क्रिया क्लोरोप्लास्ट के स्ट्रोमा (Stroma) में सम्पन्न होती है तथा इसमें प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती है। इस प्रक्रिया में वायुमण्डल द्वारा अवशोषित CO_2 विभिन्न एन्जाइमों द्वारा अपचयित होकर कार्बोहाइड्रेट्स का निर्माण करती है। इस प्रक्रिया को कार्बन स्थिरीकरण भी कहा जाता है। CO_2 के अपचयन के लिए आवश्यक ऊर्जा प्रकाशिक अभिक्रिया में बनने वाले ATP तथा $NADPH+H^+$ अणुओं से प्राप्त होती है। विभिन्न पादपों में कार्बन स्थिरीकरण निम्न तीन भिन्न प्रक्रियाओं द्वारा सम्पन्न होता है–

(क) कैल्विन–बैन्सन चक्र (Calvin-Benson cycle/C_3 cycle)

सारणी 15.1 : चक्रीय एवं अचक्रीय प्रकाश फास्फोरिलीकरण में अन्तर

क्र.सं.	चक्रीय प्रकाश फॉस्फोरिलीकरण	अचक्रीय प्रकाश फॉस्फोरिलीकरण
1.	जल का प्रकाशिक अपघटन नहीं होता है।	जल का प्रकाशिक अपघटन होता है।
2.	ऑक्सीजन का निकास नहीं होता।	ऑक्सीजन बाहर निकलती है।
3.	यह केवल एक ही प्रकाश तंत्र (PS-l) के द्वारा सम्पन्न होता है।	यह दोनों प्रकाश तंत्रों से सम्पन्न होता है।
4.	$NADPH+H^+$ का संश्लेषण नहीं होता।	$NADPH+H^+$ का संश्लेषण होता है।

फॉस्फोरिलीकरण की प्रक्रिया मिशेल के रसायन परासरी सिद्धान्त की आधुनिक अवधारणा से समझाई जा सकती है।

अतः प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया में भाग लेने वाले दो वर्णक / प्रकाश तंत्रों द्वारा जल अपघटन के कारण ऑक्सीजन मुक्त होती है तथा ATP व $NADPH+H^+$ का निर्माण होता है। ATP को **स्वांगीकरण शक्ति** व $NADPH+H^+$ को **अपचायक शक्ति** कहा जाता है (चित्र 15.6)।

(ख) हैच–स्लेक चक्र (Hatch-Slack cycle/C_4 cycle)

(ग) क्रेसूलेशियन अम्ल उपापचय चक्र (Crassulacean acid metabolism; CAM cycle)

(क) कैल्विन–बैन्सन चक्र (Calvin-Benson cycle) – प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में कार्बनडाइऑक्साइड का कार्बोहाइड्रेट में परिवर्तन का पथ रेडियोएक्टिव ट्रेसर तकनीक (Radioactive tracer technique) द्वारा कैल्विन, बैन्सन तथा साथियों ने सन्

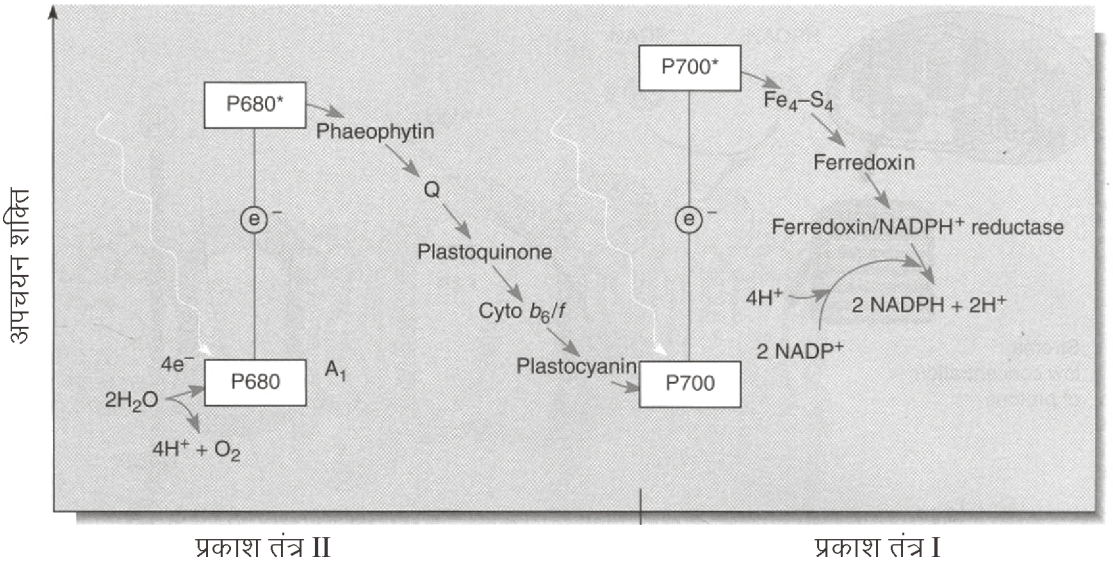

चित्र 15.6 : प्रकाशिक अभिक्रिया में सम्पन्न होने वाला अचक्रीय फॉस्फोरिलीकरण

1946–1953 के मध्य बताया था। इस कार्य के लिए उन्होंने शैवालों (*क्लोरेला* एवं *सिनडेसमस*) का संवर्धन किया व इन संवर्धित शैवालों को प्रकाश संश्लेषण के लिए रेडियोधर्मिता युक्त (Radio labelled) कार्बनडाईऑक्साइड $^{14}CO_2$ प्रदान की गई। इस प्रकार प्रदान की गई कार्बनडाईऑक्साइड से बनने वाले यौगिकों की थोड़े–थोड़े अंतराल पर रेडियोधर्मिता के आधार पर पहचान की गई। इस प्रक्रिया में सबसे पहले बनने वाला स्थिर यौगिक तीन कार्बन परमाणु युक्त 3–फॉस्फोग्लिसरिक अम्ल था, इस कारण इस चक्र को C_3 चक्र भी कहा जाता है। उन्होंने रेडियोएक्टिव कार्बन (^{14}C) युक्त यौगिकों की रेखीय शृंखला बनाकर यह बताया कि किस तरह से $^{14}CO_2$ के प्रवेश से लेकर कार्बोहाइड्रेट्स का निर्माण होता है। इस कार्य के लिए इन्हें 1961 में नोबेल पुरस्कार द्वारा सम्मानित किया गया। कैल्विन–बैन्सन चक्र में CO_2 के अपचयन को निम्न क्रमबद्ध पदों में समझा जा सकता है–

(I) कार्बोक्सिलीकरण (II) अपचयन (III) RuBP का पुनरुत्पादन

(I) **राइबुलोज 1,5–बाईफॉस्फेट का कार्बोक्सिलीकरण** – फॉस्फोरिलीकरण द्वारा बनने वाला राइबुलोज–1,5–बाईफॉस्फेट CO_2 ग्राही के रूप में कार्य करता है। राइबुलोज बाईफॉस्फेट के 6 अणु, RuBP कार्बोक्सीलेज (Rubisco) एन्जाइम की उपस्थिति में 6–6 अणु जल एवं CO_2 से क्रिया कर 12 अणु 3–फॉस्फोग्लिसरिक अम्ल का निर्माण करते हैं, जो अप्रकाशिक अभिक्रिया का पहला स्थायी यौगिक है।

$$\underset{(6\ \text{अणु})}{\text{राइबुलोज–1,5–बाईफॉस्फेट}} + 6CO_2 + 6H_2O \xrightarrow[(\text{RUBISCO})]{\text{RuBP कार्बोक्सीलेज}} \underset{12\ (\text{अणु})}{\text{फॉस्फोग्सिरिक अम्ल}}$$

(II) **अपचयन**

1. फॉस्फोग्लिसरिक अम्ल का फॉस्फोरिलीकरण – फॉस्फोग्लिसरिक काइनेज एन्जाइम की उपस्थिति में 3–फॉस्फोग्लिसरिक अम्ल के 12 अणु ATP के 12 अणुओं का उपयोग कर 12 अणु 1,3–डाइफॉस्फोग्लिसरिक अम्ल एवं 12 अणु ADP का निर्माण करते हैं।

$$\underset{(12\ \text{अणु})}{\text{3–फॉस्फोग्लिसरिक एसिड}} \xrightarrow[12\ \text{ATP} \quad 12\ \text{ADP}]{\text{फॉस्फोग्लिसरिक काइनेज}} \underset{(12\ \text{अणु})}{\text{1,3–डाइफॉस्फोग्लिसरिक अम्ल}}$$

2. 1,3–डाइफॉस्फोग्लिसरिक अम्ल का अपचयन – कार्बोक्सिलीकरण एवं फॉस्फोरिलीकरण के पश्चात् 1,3–डाईफॉस्फोग्लिसरिक अम्ल का अपचयन प्रकाशिक अभिक्रिया में बनने वाली अपचयन शक्ति (Reducing power) $NADPH+H^+$ के द्वारा होता है। इस अभिक्रिया में ट्रायोज फॉस्फेट डीहाइड्रोजीनेज एन्जाइम की उपस्थिति में 12 अणु 1,3–डाईफास्फोग्लिसरिक अम्ल से 12 अणु 3–फॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड (3-PGAL), $NADP^+$ एवं फॉस्फोरिक अम्ल (H_3PO_4) के बनते हैं।

$$\underset{(12\ \text{अणु})}{\text{1,3–डाइफॉस्फोग्लिसरिक अम्ल}} \xrightarrow[12\ \text{NADPH+H}^+ \quad 12\ \text{NADP}^+]{\text{ट्रायोज फॉस्फेट डीहाईड्रोजीनेज}} \underset{(12\ \text{अणु})}{\text{3–फॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड}} + 12H_3PO_4$$

इस प्रकार बनने वाले 3–फॉस्फोग्सिरल्डिहाइड के 12 अणुओं में से दो अणु मिलकर हेक्सोज (ग्लुकोज) शर्करा का निर्माण करते हैं जो बाद में सुक्रोज अथवा स्टार्च में रूपान्तरित हो जाती है तथा शेष बचे 10 अणु पुनः कई क्रमबद्ध जैवरासायनिक अभिक्रियाओं द्वारा 6 अणु राईबुलोज मोनो फॉस्फेट का निर्माण करते हैं जो इस चक्र को निरन्तरता प्रदान करते हैं।

3. हेक्सोज शर्करा का निर्माण – फॉस्फोट्रायोज आइसोमरेज एन्जाइम की उपस्थिति में 3–फोस्फोग्लिसरल्डिहाइड का एक अणु, डाइहाइड्रोक्सी एसिटोन फॉस्फेट (DHAP) में परिवर्तित हो जाता है।

$$\text{3–फॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड} \xrightarrow{\text{फॉस्फोट्रायोज आइसोमरेज}} \text{डाइहाइड्रोक्सीएसिटोन फॉस्फेट}$$

फ्रक्टोज–1, 6–डाईफॉस्फेट का निर्माण – एक–एक अणु डाइहाइड्रोक्सीएसिटोन फॉस्फेट व 3–फॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड के एल्डोलेज एन्जाइम की उपस्थिति में संयुक्त होकर फ्रक्टोज–1, 6–डाइफॉस्फेट का निर्माण करते हैं।

$$\text{3-PGAL} + \text{DHAP} \xrightarrow{\text{एल्डोलेज}} \text{फ्रक्टोज–1,6–डाइफॉस्फेट}$$

फ्रक्टोज–6– फॉस्फेट का निर्माण – फॉस्फेटेज एन्जाइम की उपस्थिति में जल–योजन द्वारा फ्रक्टोज–1, 6– डाईफॉस्फेट से फ्रक्टोज–6–फॉस्फेट तथा फॉस्फोरिक एसिड बनते है।

ग्लुकोज का निर्माण – फ्रक्टोज–6–फॉस्फेट पहले ग्लूकोज–1–फॉस्फेट में तथा बाद में ग्लूकोज में परिवर्तित हो जाता है।

उपरोक्त अभिक्रिया श्वसन में सम्पन्न होने वाली ग्लाइकोलाइसिस की प्रक्रिया के विपरीत (Reverse) होती है। इस कारण इन्हें ग्लाइकोलाइटिक उत्क्रमण (Glycolytic reversal) भी कहा जाता है।

(III) **राइबुलोज–5–फॉस्फेट का पुनः उत्पादन** (Regeneration of ribulose-5-phosphate)

राइबुलोज–5–फॉस्फेट के अणुओं का पुनः बनना राइबुलोज फॉस्फेट की पुनः उत्पत्ति कहलाती है। राइबुलोज फॉस्फेट की पुनः उत्पत्ति शेष बचे 10 अणु 3-PGAL से निम्न क्रमबद्ध जैवरासायनिक अभिक्रियाओं द्वारा सम्पन्न होती है।

(क) डाइहाड्रोक्सी एसिटोन फॉस्फेट का निर्माण – ट्रायोज फॉस्फेटेज आइसोमरेज एन्जाइम की उपस्थिति में 3-PGAL के 4 अणुओं से डाइहाइड्रोक्सी एसिटोन फॉस्फेट के 4 अणु बनते हैं।

$$\underset{(4\text{ अणु})}{\text{3-PGAL}} \xrightarrow{\text{ट्रायोज फॉस्फेटेज आइसोमरेज}} \underset{(4\text{ अणु})}{\text{DHAP}}$$

(ख) फ्रक्टोज–1,6–डाइफॉस्फेट का निर्माण – डाइहाइड्रोक्सी एसिटोन फॉस्फेट के दो अणु 3–फॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड के दो अणुओं से क्रिया कर फ्रक्टोज–1,6–डाइफॉस्फेट के 2 अणुओं का निर्माण करते हैं। इस क्रिया को एल्डोलेज एन्जाइम उत्प्रेरित करता है।

$$\text{3-PGAL} + \text{DHAP} \xrightarrow{\text{एल्डोलेज}} \text{फ्रक्टोज–1,6–डाइफॉस्फेट}$$

(ग) फ्रक्टोज–6–फॉस्फेट का निर्माण – फ्रक्टोज–1,6–डाइफॉस्फेट के दो अणुओं में 2 अणु जलयोजन द्वारा फॉस्फेटेज एन्जाइम की उपस्थिति में फ्रक्टोज–6–फॉस्फेट व फॉस्फोरिक अम्ल का निर्माण होता है।

$$\underset{(2\text{ अणु})}{\text{फ्रक्टोज–1,6–डाइफॉस्फेट}} \xrightarrow[2H_2O \quad 2H_3PO_4]{\text{फॉस्फेटेज}} \underset{(2\text{ अणु})}{\text{फ्रक्टोज–6–फॉस्फेट}}$$

(घ) जाइलुलोज व इरिथ्रोज फॉस्फेट का निर्माण – उपरोक्त अभिक्रिया में बनने वाले फ्रक्टोज–6–फॉस्फेट के दो अणु, 2 अणु 3-PGAL से मिलकर 2–2 अणु जाइलुलोज–5–फॉस्फेट व इरिथ्रोज–4–फॉस्फेट का निर्माण करते हैं। इस क्रिया को उत्प्रेरित ट्रांसकीटोलेज एन्जाइम करता है।

$$\underset{(2\text{ अणु})}{\text{फ्रक्टोज–6–फॉस्फेट}} + \text{3-PGAL} \xrightarrow{\text{ट्रांसकीटोलेज}} \underset{(2\text{ अणु})}{\text{जाइलुलोज–5–फॉस्फेट}} + \underset{(2\text{ अणु})}{\text{इरिथ्रोज–4–फॉस्फेट}}$$

(ङ) सिडोहेप्टुलोज–1, 7–डाइफॉस्फेट का निर्माण– इरिथ्रोज–4–फॉस्फेट, शेष बचे दो DHAP अणुओं से क्रिया कर सिडोहेप्टुलोज–1, 7–डाइफॉस्फेट का निर्माण करते हैं। इस क्रिया को उत्प्रेरित ट्रांसएल्डोलेज एन्जाइम करता है।

$$\underset{(2\text{ अणु})}{\text{इरिथ्रोज–4–फॉस्फेट}} + \underset{(2\text{ अणु})}{\text{DHAP}} \xrightarrow{\text{ट्रांसएल्डोलेज}} \underset{(2\text{ अणु})}{\text{सिडोहेप्टुलोज–1,7–डाइफॉस्फेट}}$$

उपरोक्त अभिक्रिया में बनने वाले दो अणु सिडोहेप्टुलोज–1,7–डाईफॉस्फेट, फॉस्फेटेज एन्जाइम की उपस्थिति में जल–योजन द्वारा दो–दो अणु फॉस्फोरिक अम्ल व सिडोहेप्टुलोज–7–फॉस्फेट का निर्माण करते हैं।

$$\text{सिडोहेप्टुलोज–1,7–डाइफॉस्फेट} \xrightarrow[2H_2O \quad 2H_3PO_4]{\text{फॉस्फेटेज}} \text{सिडोहेप्टुलोज–7–फॉस्फेट}$$

(च) राइबोज–5–फॉस्फेट व जाइलुलोज–5–फॉस्फेट का निर्माण– उपरोक्त अभिक्रिया में बनने वाले दो अणु सिडोहेप्टुलोज–7–फॉस्फेट, शेष बचे 2 अणु 3-PGAL से ट्रांसकीटोलेज एन्जाइम की उपस्थित में दो–दो अणु राइबोज–5–फॉस्फेट व जाइलुलोज–5–फॉस्फेट का निर्माण करते हैं।

$$\underset{(2\text{ अणु})}{\text{सिडोहेप्टुलोज–7–फॉस्फेट}} + \underset{(2\text{ अणु})}{\text{3-PGAL}} \xrightarrow{\text{फॉस्फेटेज}} \underset{(2\text{ अणु})}{\text{राइबोज–5–फॉस्फेट}} + \underset{(2\text{ अणु})}{\text{जाइलुलोज–5–फॉस्फेट}}$$

(छ) उपरोक्त अभिक्रियाओं में बनने वाले चार अणु जाइलुलोज–5–फॉस्फेट व 2 अणु राईबोज–5–फॉस्फेट निम्न अभिक्रियाओं द्वारा 6 अणु राइबुलोज–5–फॉस्फेट के बनाते हैं।

$$\text{(1) } \underset{(2\text{ अणु})}{\text{राइबोज–5–फॉस्फेट}} \xrightarrow{\text{फॉस्फोपेन्टोज आइसोमरेज}} \underset{(2\text{ अणु})}{\text{राइबुलोज–5–फॉस्फेट}}$$

$$\text{(2) } \underset{(4\text{ अणु})}{\text{जाइलुलोज–5–फॉस्फेट}} \xrightarrow{\text{फॉस्फोपेन्टोज एपिमरेज}} \underset{(4\text{ अणु})}{\text{राइबुलोज–5–फॉस्फेट}}$$

(ज) राइबुलोज मोनोफास्फेट का फॉस्फोरिलीकरण – क्लोरोप्लास्ट के स्ट्रोमा में सम्पन्न होने वाली अप्रकाशिक अभिक्रिया में CO_2 को ग्रहण करने वाला यौगिक राइबुलोज–1,5–बाईफॉस्फेट [RuBP(5 carbon compound)] है, जिसका निर्माण राइबुलोज मोनोफॉस्फेट (राइबुलोज–5–फॉस्फेट) के (फॉस्फोपेन्टो काइनेज एन्जाइम की उपस्थिति में) फॉस्फोरिलीकरण द्वारा होता है। इस प्रक्रिया में ATP का उपयोग होता है तथा ADP बनती है। कार्बनडाईऑक्साइड के 6 अणुओं को ग्रहण करने के लिए 6 अणु राइबुलोज–1,5–बाईफॉस्फेट की आवश्यकता होती है। अतः 6 अणु राइबुलोज मोनो फॉस्फेट का फोस्फोरिलीकरण ATP के 6 अणुओं द्वारा होता है।

$$\underset{(6\text{ अणु})}{\text{राइबुलोज–5–फॉस्फेट}} \xrightarrow[6\text{ ATP} \quad 6\text{ ADP}]{\text{फॉस्फोपेन्टो काइनेज}} \underset{(6\text{ अणु})}{\text{राइबुलोज–1,5–बाईफॉस्फेट}}$$

इस प्रकार राइबुलोज–5–फॉस्फेट के 6 अणुओं से ATP की क्रिया के पश्चात् राइबुलोज 1–5–बाई फॉस्फेट के 6 अणुओं का निर्माण होता है जो कि पुनः अभिक्रिया में प्रयुक्त होते हैं।

प्रकाश श्वसन (Photorespiration) – यह हरे पौधों में प्रकाश की उपस्थिति में होने वाली क्रिया है, जिसमें पौधे ऑक्सीजन ग्रहण कर बिना ऊर्जा का निर्माण किए कार्बनिक पदार्थों का ऑक्सीकरण करते हैं तथा इस प्रक्रिया में कार्बनिक पदार्थों के ऑक्सीकरण के कारण CO_2 मुक्त होती है। अतः इस क्रिया में श्वसन की तरह भोज्य पदार्थों का विघटन तो होता है परन्तु ऊर्जा मुक्त नहीं होती इस कारण इसे नष्टकारी क्रिया भी कहा जाता है। यह क्रिया केवल C_3 पादपों में ही होती है। इस क्रिया में CO_2 की अधिकता में RUBISCO (राइबुलोज बाईफास्फेट कार्बोक्सीलेज ऑक्सीजिनेज) एन्जाइम जो कि CO_2 को RUBP से जोड़ता है, ऑक्सीजिनेज एन्जाइम की तरह कार्य करने लग जाता है। यह सम्पूर्ण क्रिया हरितलवक परऑक्सीसोम व माइटोकॉन्ड्रिया में सम्पन्न होती है। इसमें सर्वप्रथम 2 कार्बन युक्त पदार्थ ग्लाइकोलेट बनता है। इसलिए इसे C_2 चक्र अथवा ग्लाइकोलेट चक्र भी कहते हैं। इस चक्र का सर्वप्रथम अध्ययन डेकर एवं टिओ (Decker and Tio, 1959) ने किया। यह चक्र अधिकतर उन पौधों में होता है जिनमें C_3 चक्र के द्वारा (CO_2) का स्थिरीकरण होता है।

(ख) हैच–स्लैक चक्र या C_4 चक्र (Hatch-Slack Cycle or C_4 Cycle) – इस चक्र में पहला स्थायी यौगिक एक चार कार्बन परमाणु युक्त डाइकार्बोक्सिलिक अम्ल बनता है। इस कारण इस चक्र को C_4 चक्र भी कहा जाता है। गन्ने के पौधे में सन् 1957 में **कोर्टचॉक** (Kortschak) व सहयोगियों ने यह बताया कि प्रकाश संश्लेषण के दौरान बनने वाला पहला उत्पाद एक चार कार्बन परमाणु युक्त डाईकार्बोक्सिलिक अम्ल होता है। उष्णकटिबंधीय (Tropical) पादपों में उक्त चार कार्बन परमाणु युक्त यौगिक की पहचान की तथा कार्बनडाईऑक्साइड स्थिरीकरण

के नये प्रकार को बताया जिसे हैच–स्लेक अथवा C_4 चक्र कहा जाता है। यह चक्र एकबीजपत्री पादपों (मक्का, गन्ना, बाजरा, रागी) के अतिरिक्त कुछ द्विबीजपत्री पादपों जैसे– *अमरेंथस* (Amaranthus), *यूफोरबिया* (Euphorbia) व कई खरपतवारों (Weeds) में पाया जाता है। वे पौधे जिनमें C_4 चक्र पाया जाता है, C_4 पौधे (C_4 plants) कहलाते हैं।

C_4 पौधों की पत्तियों में दो प्रकार की प्रकाशसंश्लेषी कोशिकाएँ पायी जाती हैं जिन्हें क्रमशः पर्ण मध्योतक कोशिकाएँ (Mesophyll cells) व पूल–आच्छद (Bundle sheath) कोशिकाएँ कहते हैं। पूल–आच्छद कोशिकाएँ, संवहन बण्डल पर माला (Wreath) रूपी रचना में आच्छद रहती हैं। जर्मन भाषा में रीथ (Wreath=kranz) को क्रेंज कहा जाता है। अतः पत्तियों की इस प्रकार की शारीरिकी क्रेंज शारीरिकी (Kranz anatomy) कहलाती है। C_4 पौधों की पत्तियों में पाये जाने वाले हरितलवक (Chloroplast) दो प्रकार (Dimorphic) के होते हैं। पर्णमध्योतक कोशिकाओं में पाये जाने वाले हरितलवक छोटे व सुविकसित ग्रेना युक्त होते हैं, जबकि पूल–आच्छद कोशिकाओं में पाये जाने हरितलवक आकार में बड़े व इनमें ग्रेना सामान्यतः अनुपस्थित होता है तथा थाइलेकॉइड केवल स्ट्रोमा पट्टलिकाओं के रूप में पाये जाते हैं। C_4 पादपों में प्रकाशिक अभिक्रियाएं पर्णमध्योतक कोशिकाओं में सम्पन्न होती है। जबकि कार्बनडाईऑक्साइड स्वांगीकरण (CO_2 assimilation) पूल–आच्छद कोशिकाओं में सम्पन्न होता है।

C_4 पादपों में प्रकाश श्वसन (Photorespiration) अनुपस्थित होता है। इस चक्र की मुख्य विशेषताएं ये हैं– 1. ये दो प्रकार की कोशिकाओं के सहयोग से सम्पन्न होता है। 2. पूल–आच्छद कोशिकाओं में CO_2 की सांद्रता बढ़ जाती है, जो कार्बोक्सिलीकरण में सहयोग करती है व प्रकाश श्वसन को रोकती है।

C_4 चक्र की क्रिया विधि (Mechanism of C_4 Cycle) – C_4 चक्र में वायुमण्डल से CO_2 रंध्रों के द्वारा पर्णमध्योतक कोशिकाओं के कोशिकाद्रव्य में प्रवेश करती है, जहाँ यह 3 कार्बन युक्त प्राथमिक ग्राही **फॉस्फाइनोल पाइरूविक अम्ल** (Phosphoenol pyruvic acid, PFP) द्वारा ग्रहण कर ली जाती है। परिणामस्वरूप 4 कार्बन युक्त यौगिक ऑक्सेलोएसिटिक अम्ल (Oxaloacetic acid) का निर्माण होता है, जो इस प्रक्रिया का प्रथम स्थायी उत्पाद है। यह अभिक्रिया फॉस्फोइनोल पाइरूवेट कार्बोक्सीलेज एन्जाइम (PEP carboxylase, PEPCO) द्वारा उत्प्रेरित होती है। यह प्रक्रिया CO_2 स्थिरीकरण अथवा कार्बोक्सिलीकरण कहलाती है। ऑक्सेलोएसिटिक अम्ल के अपचयन के पश्चात् मैलिक अम्ल पर्णमध्योतक कोशिकाओं के कोशिका द्रव्य से पूल–आच्छद कोशिका में प्रवेश करता है जहाँ डीकार्बोक्सिलीकरण (Decarboxylation) के पश्चात् CO_2 की सान्द्रता बढ़ जाती है। यह CO_2 अब C_3 चक्र में प्रवेश कर शर्करा का निर्माण करती है तथा बनने वाला 3 कार्बन परमाणु युक्त यौगिक (पाइरूविक एसिड) पुनः पर्णमध्योतक कोशिकाओं में प्रवेश कर जाता है। पर्णमध्योतक कोशिकाओं में पाइरूविक अम्ल, फॉस्फोइनोल पाइरूविक अम्ल का निर्माण करता है जो इस चक्र को निरन्तरता प्रदान करता है। इस प्रक्रम में 6 CO_2 के स्थिरीकरण में 30 ATP का उपयोग होता है। सम्पूर्ण चक्र को चित्र 15.7 के द्वारा समझा जा सकता है।

महत्त्व (Importance) – C_4 चक्र C_3 चक्र से अधिक दक्ष (Efficient) है क्योंकि –

1. C_4 पौधों में प्रकाश श्वसन अनुपस्थित होता है, इस कारण इन पौधों की उत्पादकता C_3 पौधों की अपेक्षा 3 से 4 गुना तक बढ़ जाती है।
2. इस चक्र का प्रमुख एन्जाइम (PEPCO) CO_2 की कम सान्द्रता पर भी क्रियाशील रहता है तथा

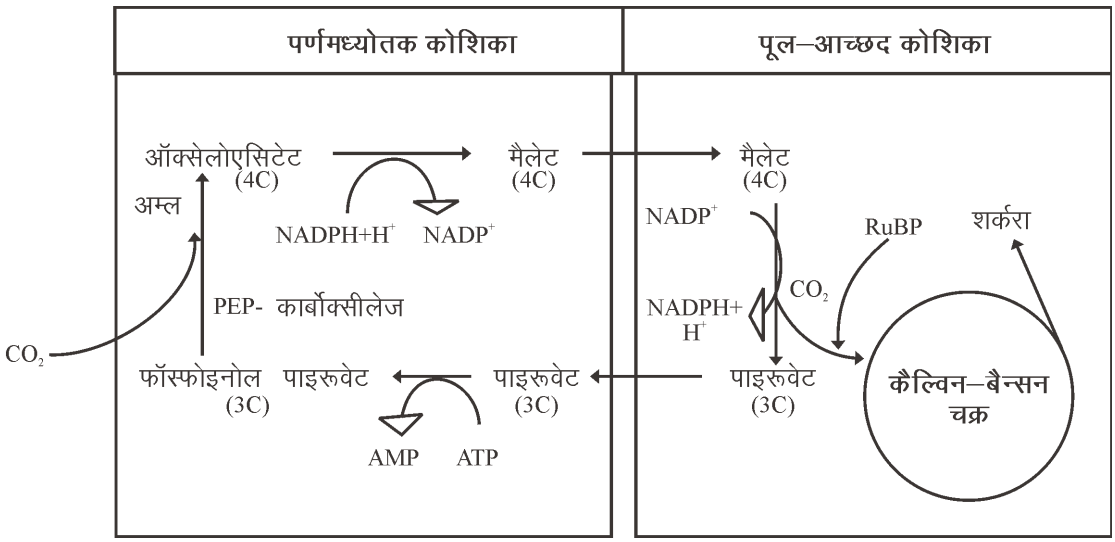

चित्र 15.7 : C_4 पादपों में सम्पन्न होने वाली प्रकाश संश्लेषण की अभिक्रियाएं

3. यह चक्र उच्च तापक्रम (30-45° C) पर भी क्रियाशील रहता है।

C_3 व C_4 चक्र में महत्वपूर्ण अन्तर निम्न सारणी 15.2 में दर्शाये गये हैं।

(ग) क्रेसूलेसियन अम्ल उपापचय [Crassulacean Acid Metabolism (CAM)] – जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि C_3 एवं C_4 पादपों में CO_2 का प्रवेश पत्ती में दिन के समय होता है अर्थात् पत्ती में पाये जाने वाले रंध्र दिन में खुले रहते हैं। दिन में वाष्पोत्सर्जन की दर अधिक होती है। क्रेसूलसियन अम्ल उपापचय सामान्यतः माँसलोभिद् (Succulent) एवं शुष्क वातावरण में पाये जाने वाले पौधों में होता है। इन पादपों में रंध्र रात्रि के समय खुलते हैं तथा दिन में बन्द रहते हैं। अतः ये पौधे रात्रि में CO_2 को कार्बनिक अम्लों के रूप में (C_4 पादपों की तरह) एकत्रित कर लेते हैं एवं दिन में डीकार्बोक्सिलीकरण के द्वारा इन कार्बनिक अम्लों से मुक्त होने वाली CO_2 का उपयोग केल्विन–बैन्सन चक्र द्वारा कार्बोहाइड्रेट निर्माण में कर लिया जाता है।

अतः मॉसलोद्भिद् प्रकार के शुष्कोदभिद् पादपों में यह एक प्रकार का कार्यिकीय अनुकूलन है जिसके द्वारा बिना जल हानि के पौधे कार्बनिक पदार्थों का निर्माण कर लेते हैं। इस उपपाचयी क्रिया विधि का अध्ययन सबसे पहले क्रेसूलेसी कुल के पौधों में किया गया था इस कारण इसे क्रेसूलेसियन अम्ल उपापचय कहते हैं।

प्रकाश संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting Photosynthesis)

पादपों द्वारा होने वाली प्रकाश संश्लेषण की क्रिया वातावरणीय एवं आनुवंशिक कारकों द्वारा प्रभावित होती है। यहाँ वातावरणीय कारकों का अध्ययन बाह्य कारकों एवं आनुवंशिक कारकों का अध्ययन आन्तरिक कारकों के रूप में करेंगे–

(i) **बाह्य कारक** (External factors) – प्रकाश, कार्बनडाइऑक्साइड की उपलब्धता, तापमान, मृदा–जल आदि महत्त्वपूर्ण बाह्य कारक हैं जो प्रकाश संश्लेषण की क्रिया को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से प्रभावित करते हैं। इन कारकों के अध्ययन से पहले ब्लैकमेन के सीमाकारी कारकों के नियम का अध्ययन करना आवश्यक है।

ब्लैकमेन के सीमाकारी कारकों के नियम से पहले प्रकाश संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारकों के बारे में यह अवधारणा थी कि किसी कारक की वह मात्रा जिस पर प्रकाश संश्लेषण की क्रिया आरम्भ होती है उसे न्यूनतम बिन्दु, जिस मात्रा पर अधिकतम होती है उसे अनुकूलतम बिन्दु तथा वह अधिकतम मात्रा जिस पर प्रकाश संश्लेषण की क्रिया रूक जाती है उसे अधिकतम बिन्दु कहते हैं। इन तीनों अवस्थाओं को कार्डिनल बिन्दु (Cardinal points) कहा जाता है।

ब्लैकमेन (1905) के सीमाकारी कारकों के नियम के अनुसार यदि कोई प्रक्रिया अनेक कारकों द्वारा प्रभावित होती है, तो उस प्रक्रिया की दर सबसे कम मात्रा में उपस्थित या सबसे धीमे कारक पर निर्भर करती है। जैसे कि प्रकाश संश्लेषण की क्रिया

सारणी 15.2 : C_3 तथा C_4 चक्र में अन्तर

लक्षण	C_3 चक्र	C_4 चक्र
1. अनुकूल तापमान	20-25°C	30-45°C
2. क्रेंज शारीरिकी	नहीं पाई जाती है।	पाई जाती है।
3. CO_2 स्थिरीकरण का स्थल	केवल पर्ण मध्योतक कोशिकाओं में होता है।	पर्ण मध्योतक एवं पूल–आच्छद कोशिकाओं में होता है।
4. प्रथम स्थायी उत्पाद	PGA (3 कार्बन पदार्थ)	ऑक्सेलोएसिटिक अम्ल (4 कार्बन पदार्थ)
5. CO_2 स्थिरीकरण के पथ	कैल्विन–बैन्सन चक्र	पर्ण मध्योतक कोशिकाओं में कैल्विन–बैन्सन चक्र तथा पूल–आच्छद कोशिकाओं में हेच–स्लैक चक्र
6. CO_2 ग्राही	RUBP (5 कार्बन पदार्थ)	PEP (3 कार्बन पदार्थ–प्राथमिक ग्राही)
7. कार्बोक्सिलीकरण के लिए मुख्य एन्जाइम	RUBISCO	PEP कार्बोक्सीलेज व RUBISCO
8. CO_2 स्थिरीकरण की दर	कम	अधिक
9. प्रकाश श्वसन	अधिक होता है	नहीं होता।
10. उत्पादकता	कम	अधिक

के लिये प्रकाश उपलब्ध है परन्तु CO_2 नहीं अतः प्रकाश संश्लेषण की दर CO_2 की उपलब्धता पर निर्भर करती है। अगर CO_2 व प्रकाश दोनों ही सीमाकारी हैं तो प्रकाश संश्लेषण की दर अधिक सीमाकारी कारक की मात्रा पर निर्भर करेगी।

प्रकाश संश्लेषण की क्रिया विधि को प्रभावित करने वाले प्रमुख बाह्य कारक निम्न हैं–

प्रकाश (Light) – प्रकाश संश्लेषण की क्रिया प्रकाश स्पेक्ट्रम के दृश्य भाग (400 नेनोमीटर से 700 नेनोमीटर) में ही सम्पन्न होती है जिसे PAR कहते हैं। यह क्रिया प्रकाश के प्रकार एवं उसकी तीव्रता द्वारा प्रभावित होती है। प्रकाश संश्लेषण की अधिकतम दर दृश्य स्पैक्ट्रम के लाल भाग में एवं उससे कम नीले रंग में होता है। हरे रंग में प्रकाश संश्लेषण नहीं होता है। ज्यों–ज्यों प्रकाश की तीव्रता बढ़ती है प्रकाश संश्लेषण की दर प्रारम्भ में बढ़ती है परन्तु उच्च प्रकाश तीव्रता पर इस क्रिया की दर घट जाती है। क्योंकि या तो प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में भाग लेने वाले अन्य कारक सीमाकारी हो जाते हैं या क्लोरोफिल वर्णकों का विनाश हो जाता है।

क्लोरोफिल का विनाश ऑक्सीजन की उपस्थिति में होता है, अतः इसे क्लोरोफिल का प्रकाशिक ऑक्सीकरण (Photo-oxidation) कहते हैं। प्रकाश प्रखरता/तीव्रता के प्रति विभिन्न जातियों के पौधों की सहिष्णुता भी भिन्न–भिन्न होती है। उसके आधार पर कुछ पौधे तीव्र सूर्य के प्रकाश के आदि होते हैं जिन्हें सूर्यानुरागी (Heliophyte) व कुछ पौधे छाया में वृद्धि करते हैं। जिन्हें छायानुरागी (Sciophyte) पौधे कहते हैं।

तापक्रम (Temperature) – प्रकाश संश्लेषण की क्रिया तापक्रम की सीमाओं में सम्पन्न होती है। कोनीफरस में –35°C तापक्रम पर भी प्रकाश संश्लेषण की क्रिया हो सकती है। कुछ मरूद्भिद् पादपों में (55°C) पर भी प्रकाश संश्लेषण की क्रिया सम्पन्न होती है। अत्यधिक तापक्रम पर प्रकाश संश्लेषण की क्रिया की दर में कमी आती है, क्योंकि – (1) उच्च ताप पर प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में भाग लेने वाले एन्जाइम विकृत हो जाते हैं तथा (2) C_3 चक्र में भाग लेने वाले एन्जाइम RUBISCO की CO_2 से बंधुता (Affinity) घट जाती है। C_4 पौधे कम तापक्रम के प्रति संवेदी होते हैं, क्योंकि इस क्रिया में भाग लेने वाला एन्जाइम पाइरूवेट डाई काइनेज निम्न तापक्रम के लिए संवेदी होता है।

अलग–अलग वातावरण में पाये जाने वाले पौधे तापक्रम के प्रति भिन्न रूप में संवेदी होते हैं।

कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) – वायुमण्डल में कार्बनडाइऑक्साइड की मात्रा 0.03 प्रतिशत तक होती है जो दूसरी गैसों की तुलना में बहुत कम है। C_3 व C_4 पादपों की उपलब्ध CO_2 की मात्रा के प्रति अनुक्रिया भिन्न–भिन्न होती है। पादपों में जब दूसरे कारक सीमाकारी नहीं हो तब CO_2 की सान्द्रता 0.05 प्रतिशत तक बढ़ने के साथ–साथ प्रकाश संश्लेषण की दर बढ़ती है। जबकि C_4 पादपों में प्रकाश संश्लेषण की दर 0.03 प्रतिशत तक CO_2 की सान्द्रता के बढ़ने तक ही बढ़ती है। वैज्ञानिकों के अनुसार 2020 तक वातावरण में CO_2 की सान्द्रता अनुमानित 0.06 प्रतिशत तक बढ़ जायेगी जिससे C_3 पौधों में वृद्धि ज्यादा होगी।

जल (Water) – पौधों द्वारा मृदा से अवशोषित जल के केवल 1 प्रतिशत भाग का ही प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में उपयोग होता है। अतः यह प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में सीधे प्रयोग में आने वाले पदार्थ के रूप में सीमाकारी कारक नहीं होता है।

(ii) **आन्तरिक कारक** (Internal factors) – प्रकाश संश्लेषण की दर को प्रभावित करने वाले प्रमुख आन्तरिक कारक निम्न हैं–

पर्णहरित (Chlorophyll) – सामान्य परिस्थितियों में यह सीमाकारी कारक नहीं है। पर्णहरित प्रकाश संश्लेषण की क्रिया के लिए अति आवश्यक कारक है। इसकी अनुपस्थिति में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया सम्भव नहीं है।

संचित भोजन की मात्रा (Amount of stored food) – पादपों की कोशिकाओं में संचित भोजन की मात्रा बढ़ने के साथ प्रकाश संश्लेषण की दर घटती है। प्रकाश संश्लेषज (Photo synthates) का पौधे के दूसरे भागों में स्थानान्तरण हो जाने पर यह दर पुनः बढ़ जाती है।

अतः प्रकाश संश्लेषण एक प्रकाश व जैवरासायनिक प्रक्रिया है। जो उपरोक्त कारकों द्वारा प्रभावित होती है।

प्रकाश संश्लेषजों का स्थानान्तरण (Transportation of Photosynthates)

प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में बनने वाले कार्बोहाइड्रेट्स प्रकाश संश्लेषज कहलाते हैं। जिनका निर्माण पौधों की हरी पत्तियों एवं हरे भागों में होता है। इन उच्च ऊर्जा वाले कार्बनिक पदार्थों का पत्तियों से पौधों के अन्य भागों जैसे– जड़ एवं तने के ऊतकों में स्थानान्तरण फ्लोएम द्वारा होता है। इन पदार्थों का संग्राहक ऊतकों तक होने वाला स्थानान्तरण फसलों की उत्पादकता बढ़ाता है। पौधों में सुक्रोज प्रमुख कार्बोहाइड्रेट है, जिसका स्थानान्तरण पत्तियों से संग्राहक अंगों तक होता है। क्योंकि यह एक अनअपचायक शर्करा है व रासायनिक रूप से स्थायी है। संग्राहक भागों में यह स्टार्च के रूप में संचित रहती है।

यह प्रकाश संश्लेषज पादपों के अन्य भागों में सम्पन्न होने वाली जैवरासायनिक अभिक्रियाओं को श्वसन द्वारा ऊर्जा प्रदान करते हैं।

प्रकाश संश्लेषण का महत्त्व
(Significance of Photosynthesis)

प्रकाश संश्लेषण की क्रिया पृथ्वी पर सभी सजीवों के लिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यही ऐसी क्रिया है जिससे सूर्य के प्रकाश रूपी भौतिक ऊर्जा का रूपान्तरण कार्बोहाइड्रेट रूपी रासायनिक ऊर्जा में होता है। पृथ्वी पर पाये जाने वाले सभी जीव प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से अपने भोजन के लिये पौधों पर निर्भर रहते हैं। इस क्रिया के द्वारा ही पेड़–पौधे प्रकाश ऊर्जा को कार्बनिक पदार्थों में रूपान्तरित करते हैं, जिससे इनका जैव–भार बढ़ता है, जिसका मानव तथा इस पृथ्वी पर पाये जाने वाले अन्य विषमपोषी जीव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उपयोग करते है। इस क्रिया के द्वारा ही प्राण वायु O_2 वायुमण्डल में बनी रहती है जो जैव मण्डल में पाये जाने वाले जीवों के लिए काम आती है।

दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि पृथ्वी पर पाये जाने वाले सभी वायवीय जीवों का जीवन प्रकाश संश्लेषण की क्रिया के बिना संभव नहीं है। इस कारण से ही वैज्ञानिक समुदाय तरह–तरह के प्रयोग कर फसलों की उच्च उत्पादकता वाली किस्में उत्पन्न करते हैं। सभी देशों की सरकारें व अन्तर्राष्ट्रीय समाजसेवी संस्थाएं वृक्षारोपण पर बल देते हैं, जिससे सूर्य की अथाह प्रकाश ऊर्जा का रासायनिक ऊर्जा में रूपान्तरण हो सके।

रसायन संश्लेषण (Chemosynthesis)

कुछ जीवाणु अकार्बनिक पदार्थों के ऑक्सीकरण द्वारा मुक्त होने वाली रासायनिक ऊर्जा का उपयोग कार्बनिक (भोज्य) पदार्थ बनाने में करते हैं, यह क्रिया रसायन संश्लेषण कहलाती है। कुछ महत्त्वपूर्ण रसायन संश्लेषी जीवाणु निम्न हैं–

(i) ***नाइट्रोसोमोनास व नाइट्रोकोकस*** – ये जीवाणु अमोनिया का ऑक्सीकरण नाइट्राइट में करते हैं व इस क्रिया में मुक्त होने वाली रासायनिक ऊर्जा का उपयोग कार्बनिक पदार्थ बनाने में किया जाता है।

(ii) **आयरन जीवाणु** – जैसे *फैरोबेसिलस* व *लेप्टोथ्रिक्स* आदि फैरस (Fe^{+2}) का ऑक्सीकरण फैरिक (Fe^{+3}) में करते हैं व मुक्त होने वाली ऊर्जा का उपयोग कार्बनिक पदार्थों के संश्लेषण में करते हैं।

रसायनी संश्लेषण के कुछ अन्य उदाहरण सल्फर जीवाणु (*थायोथ्रिक्स*), हाइड्रोजन जीवाणु (*बेसिलस पेन्टोट्रोपस*) व कार्बन जीवाणु (*बेसिलस ओलिगोकार्बोफिलस*) है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. प्रकाश संश्लेषण एक महत्त्वपूर्ण जैविक क्रिया है जिसमें हरे पादप सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में कार्बनडाइऑक्साइड व जल द्वारा जटिल कार्बनिक यौगिकों का निर्माण करते हैं।
2. प्रकाश संश्लेषण की क्रिया क्लोरोप्लास्ट में सम्पन्न होती है, जिसमें पाये जाने वाले थायलेकॉइड में हरे वर्णक क्लोरोफिल्स व सहायक वर्णक जिन्हें कैरोटिनॉइड कहते हैं, पाये जाते हैं।
3. थायलेकॉइड एक दूसरे के ऊपर व्यवस्थित होकर ग्रेना का निर्माण करते हैं जहाँ प्रकाश संश्लेषण की प्रकाशिक अभिक्रियायें सम्पन्न होती हैं।
4. क्लोरोफिल-a प्रकाश रासायनिक अभिक्रियाओं में अभिक्रिया केन्द्र की तरह कार्य करता है।
5. प्रकाश ऊर्जा का अवशोषण प्रारम्भ में कई क्लोरोफिल अणुओं एवं अन्य सहायक वर्णकों द्वारा होता है, जो बाद में इस प्रकाश ऊर्जा का अभिक्रिया केन्द्र में स्थानान्तरित कर देते हैं। ये सभी वर्णक मिलकर दो प्रकाश तंत्रों का निर्माण करते हैं, जिन्हें प्रकाश तंत्र-I व प्रकाश तंत्र-II कहा जाता है।
6. प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया के दौरान जल का प्रकाशिक अपघटन होता है जिसमें O_2 मुक्त होती है। यह क्रिया प्रकाश तंत्र-II के द्वारा होती है। इस क्रिया में मुक्त होने वाले इलेक्ट्रॉन्स, इलेक्ट्रॉन परविहन शृंखला की शुरूआत करते हैं। इस प्रक्रिया में बनने वाले ATP व $NADPH+H^+$ का उपयोग CO_2 के अपचयन में किया जाता है। जिससे कार्बोहाइड्रेट्स का निर्माण होता है।
7. कार्बनडाइऑक्साइड का अपचयन स्ट्रोमा में होता है जहाँ इस क्रिया के लिए आवश्यक सभी एन्जाइम पाये जाते हैं। RUBISCO एन्जाइम प्रारम्भिक अभिक्रिया उत्प्रेरित करता है, जिससे 3 कार्बन परमाणु युक्त यौगिक 3–फॉस्फोग्लिसरिक अम्लका निर्माण होता है। इस कारण कार्बन स्थिरीकरण का यह पथ C_3 चक्र कहलाता है। इस चक्र को सबसे पहले कैल्विन व साथियों ने समझाया था इस कारण इसे कैल्विन–बैन्सन चक्र भी कहा जाता है। C_3 पादपों में होने वाले प्रकाश श्वसन में स्थिरीकृत कार्बनिक यौगिकों का ह्रास होता है परन्तु ऊर्जा अणुओं का निर्माण नहीं होता है।
8. कुछ पादपों में कार्बन स्थिरीकरण का पहला उत्पाद चार कार्बन युक्त योगिक होता है अतः इन पादपों को C_4 पादप व इस चक्र को C_4 चक्र कहा जाता है। C_4 पादपों में प्रकाश श्वसन नहीं होता है।
9. पादपों में प्रकाश संश्लेषण की दर कई वातावरणीय कारकों पर निर्भर करती है जिसमें से CO_2 की सान्द्रता, प्रकाश की तीव्रता, जल की उपलब्धता व तापमान प्रमुख हैं। प्रकाश संश्लेषण की दर पत्ती की आयु तथा क्लोरोफिल व सहायक वर्णकों की मात्रा पर भी निर्भर करती है।

10. प्रकाश संश्लेषण का अन्तिम उत्पाद सुक्रोज है, जिसका निर्माण पर्णमध्योतक कोशिका के कोशिकाद्रव्य में होता है तथा इसका पौधे के अन्य भागों में स्थानान्तरण फ्लोयम ऊतकों द्वारा होता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. प्रकाश संश्लेषण में मुक्त होने वाली ऑक्सीजन का स्रोत है–
   (अ) जल (ब) कार्बनडाइऑक्साइड
   (स) ग्लूकोज (द) अ, ब दोनों
2. प्रकाश तंत्र-I का अभिक्रिया केन्द्र है–
   (अ) P_{700} (ब) P_{660}
   (स) P_{680} (द) P_{450}
3. प्रकाश संश्लेषण की अप्रकाशिक अभिक्रिया सम्पन्न होती है–
   (अ) स्ट्रोमा में (ब) ग्रेना में
   (स) माइटोकॉन्ड्रिया में (द) उपरोक्त सभी में
4. निम्न में से C_4 पादप कौन–सा है–
   (अ) सूर्यमुखी (ब) मटर
   (स) आलू (द) *अमरेन्थस*
5. C_4 चक्र में कार्बनडाइऑक्साइड का प्राथमिक स्थिरीकरण निम्न में से किसके द्वारा होता है–
   (अ) RuBP (ब) ऑक्सेलो एसिटिक अम्ल
   (स) PEP (द) फॉस्फोग्लाइकोलिक अम्ल
6. प्रकाश संश्लेषण का प्रथम चरण है–
   (अ) तीन परमाणु युक्त यौगिकों का जुड़कर ग्लुकोज बनाना
   (ब) ATP का निर्माण
   (स) जल का आयनीकरण
   (द) प्रकाश–फोटोन के कारण क्लोरोफिल से इलेक्ट्रॉन का उत्तेजित होना
7. निम्न में से क्रेन्ज शारीरिकी (Kranz anatomy) पायी जाती है–
   (अ) C_3 पादप में (ब) C_2 पादप में
   (स) C_4 पादप में (द) माँसलोद्भिदों में
8. निम्न में से क्लोरोफिल का संरचनात्मक घटक है–
   (अ) Mg^{++} (ब) Mn^{++}
   (स) Zn^{++} (द) Fe^{++}
9. प्रकाश श्वसन निम्न में से किसका लाक्षणिक लक्षण है–
   (अ) C_3 पौधों में (ब) CAM पौधों में
   (स) C_4 पौधों में (द) सभी पौधों में
10. पादपों में होने वाली अप्रकाशिक अभिक्रिया (C_3 चक्र) का पहला स्थायी उत्पाद है–
    (अ) PGA (ब) RUBP
    (स) PEP (द) OAA

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

1. प्रकाश संश्लेषण को परिभाषित कीजिये।
2. हरे पौधों में प्रकाश ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में रूपांतरित करने वाले वर्णकों को समझाइये।
3. प्रकाश संश्लेषण का रासायनिक समीकरण लिखिये।
4. प्रकाशिक एवं अप्रकाशिक अभिक्रिया में अन्तर बताइये।
5. ''रेड ड्रॉप'' को समझाइये।
6. इमर्सन वृद्धिकरण प्रभाव को समझाइये।
7. प्रकाश तंत्र-I एवं प्रकाश तंत्र-II में अन्तर बताइये।
8. प्रकाश श्वसन को परिभाषित कीजिये।
9. C_3 एवं C_4 पादपों में अन्तर लिखिये।
10. कार्बन डाइऑक्साइड के अपचयन के लिये आवश्यक प्रारम्भिक एन्जाइम का नाम लिखिये।
11. क्लोरोप्लास्ट को समझाइये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न

1. प्रकाश संश्लेषण के इतिहास का संक्षिप्त में वर्णन कीजिय।
2. क्लोरोफिल वर्णक क्या होता है इसकी संरचना लिखिये।
3. प्रकाश तंत्र-I की क्रिया विधि को समझाइये।
4. चक्रीय एवं अचक्रीय प्रकाश फॉस्फोरिलीकरण का सचित्र वर्णन कीजिये।
5. प्रकाश संश्लेषण का महत्व बताइये।
6. प्रकाश संश्लेषण की क्रिया विधि सचित्र समझाइये।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रकाश तंत्र-I एवं प्रकाश तंत्र-II का सचित्र वर्णन लिखिये।
2. पादपों में कार्बन स्थिरीकरण की प्रक्रियाओं का सचित्र वर्णन कीजिये।
3. प्रकाश संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिये तथा इसके महत्व को समझाइये।
4. केल्विन–बैन्सन चक्र का सचित्र वर्णन कीजिये।

उत्तरमालाः 1 (अ) 2 (अ) 3 (अ) 4 (द) 5 (स) 6 (द) 7 (स) 8 (अ) 9 (अ) 10 (अ)

अध्याय – 16

श्वसन
(Respiration)

सभी सजीवों चाहे वे सूक्ष्मजीवी हो या जन्तु अथवा पादप हो, को अपनी जैविक क्रियाएं सम्पादित करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा उनमें विभिन्न प्रकार के जटिल कार्बनिक पदार्थों के रूप में संचित रहती है। इस प्रकार की ऊर्जा का संचय पादप सूर्य के प्रकाश में हरितलवक (Chloroplast) की सहायता से प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा करते हैं। जटिल कार्बनिक पदार्थों में संचित यह ऊर्जा ऑक्सीकरण की क्रिया द्वारा स्वतन्त्र होती है। इस क्रिया में जटिल कार्बनिक पदार्थ ऑक्सीजन (O_2) की उपस्थित में विघटित होकर कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) व जल के साथ–साथ ऊर्जा मुक्त करते हैं।

अतः श्वसन सजीव कोशिकाओं में सम्पन्न होने वाली वह प्रक्रिया है जिसमें उच्च ऊर्जा वाले जटिल कार्बनिक पदार्थ विघटित होकर सरल व निम्न ऊर्जा वाले अणुओं का निर्माण करते हैं व ऊर्जा मुक्त होती है। इस प्रकार मुक्त होने वाली ऊर्जा का उपयोग कोशिका में सम्पन्न होने वाली विभिन्न क्रियाओं के सम्पादन में किया जाता है। श्वसन सभी सजीवों की आधारभूत विशेषता है व यह सभी जीवित कोशिकाओं में निरन्तर होता है। पादप श्वसन की प्रक्रिया में वायुमण्डल से O_2 लेते हैं व CO_2 मुक्त करते हैं।

1. श्वसन के क्रियाधार (Respiratory Substrates)

श्वसन में ऑक्सीकृत होने वाले उच्च ऊर्जावान अणु श्वसन के क्रियाधार कहलाते हैं। ये क्रियाधार कार्बोहाइड्रेट, वसा व

सारणी 16.1: ऑक्सी श्वसन एवं अनॉक्सी श्वसन में अन्तर

ऑक्सी श्वसन	अनॉक्सी श्वसन
यह ऑक्सीजन की उपस्थिति में होता है। सभी जीवित कोशिकाओं में होता है।	इसमें ऑक्सीजन की आवश्यकता नहीं होती। यह केवल कवक, जीवाणु, संग्रहित एवं अंकुरित होते हुए बीजों आदि में होता है।
इस श्वसन में ग्लुकोज के एक अणु के पूर्ण ऑक्सीकरण के द्वारा 38 ATP के अणुओं का निर्माण होता है।	इसमें ग्लुकोज का पूर्ण ऑक्सीकरण नहीं होता। तथा केवल 2 ATP अणुओं का निर्माण होता है।
इस प्रकार के श्वसन में होने वाली ग्लाइकोलाइसिस कोशिका द्रव्य में एवं क्रेब चक्र माइटोकोन्ड्रिया में सम्पन्न होती है।	सभी क्रियायें कोशिका द्रव्य में सम्पन्न होती हैं।
इसमें श्वसनीय पदार्थों का पूर्ण ऑक्सीकरण होता है।	इसमें श्वसनीय पदार्थों का अपूर्ण ऑक्सीकरण होता है।
इसमें CO_2, पानी एवं ऊर्जा का निर्माण होता है।	इसमें एल्कोहॉल/अम्ल, CO_2 एवं ऊर्जा का निर्माण होता है।

प्रोटीन के अणुओं के रूप में कोशिका में संग्रहित रहते हैं इनमें से कार्बोहाइड्रेट्स श्वसन के प्रमुख/प्राथमिक क्रियाधार होते हैं। श्वसन में सबसे पहले उपयोग में लिया जाने वाला क्रियाधार हेक्सोज शर्करा, कार्बोहाइड्रेट होती है, जबकि जटिल कार्बोहाइड्रेट्स को पहले सरल शर्कराओं में विघटित किया जाता है। कार्बोहाइड्रेट की अनुपस्थिति में वसा तथा वसा के भी उपयोग में आ जाने पर प्रोटीन्स का ऑक्सीकरण होता है। जब श्वसन में प्रोटीन्स का क्रियाधार के रूप में उपयोग होता है तो इस प्रकार का श्वसन प्रोटोप्लाज्मिक श्वसन कहलाता है। इसी प्रकार कार्बोहाइड्रेट एवं वसा का क्रियाधार के रूप में उपयोग होने पर इसे उत्प्लावी (Floating) श्वसन कहते हैं।

2. श्वसन के प्रकार (Types of Respiration)

श्वसन सामान्यतः निम्न दो प्रकार का होता है –

(i) ऑक्सी श्वसन (ii) अनॉक्सी श्वसन (सारणी 16.1)

(i) **ऑक्सी श्वसन** (Aerobic respiration) – इस प्रकार का श्वसन ऑक्सीजन (O_2) की उपस्थिति में होता है। इस प्रकार के श्वसन में खाद्य पदार्थ/कार्बोहाइड्रेट का पूर्ण ऑक्सीकरण होता है परिणामस्वरूप कार्बोहाइड्रेट, CO_2 एवं जल में विघटित होकर ऊर्जा मुक्त करते हैं। इस प्रकार के श्वसन में मुक्त होने वाली ऊर्जा की मात्रा अधिक होती है। ऑक्सी श्वसन को निम्न रासायनिक समीकरण द्वारा दर्शाया जाता है–

$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \rightarrow 6CO_2 + 6H_2O + 686 \text{ kcal/mol ऊर्जा}$$

(ii) **अनॉक्सी श्वसन** (Anaerobic respiration) – इस प्रकार का श्वसन ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में होता है। इस श्वसन में कार्बोहाइड्रेट का पूर्ण ऑक्सीकरण नहीं होता है जिससे कम मात्रा में ऊर्जा मुक्त होती है तथा एल्कोहॉल अथवा कार्बनिक अम्लों एवं CO_2 का निर्माण होता है। यह श्वसन अन्तराणविक श्वसन (Intramolecular respiration) भी कहलाता है। अनॉक्सी श्वसन को निम्न रासायनिक अभिक्रिया द्वारा प्रदर्शित किया जाता है–

$$C_6H_{12}O_6 \rightarrow 2C_2H_5OH + 2CO_2 + 28 \text{ kcal/mol ऊर्जा}$$

संग्रहित एवं अंकुरित होते हुए बीजों, माँसल फलों में अस्थायी रूप से अनॉक्सी श्वसन पाया जाता है जबकि कवकों एवं जीवाणुओं में यह एक नियमित प्रक्रिया है।

3. श्वसन की क्रिया–विधि (Mechanism of Respiration)

श्वसन सामान्यतः निम्न दो प्रकार का होता है–

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि श्वसन की प्रक्रिया प्रायः ग्लुकोज शर्करा से आरम्भ होती है। ऑक्सी एवं अनॉक्सी श्वसन की प्रारम्भिक अभिक्रियाएं कोशिकाद्रव्य (Cytosol) में होती है तथा एक समान ही सम्पन्न होती है। इन आरम्भिक अभिक्रियाओं में ग्लुकोज के एक अणु से पाइरूविक अम्ल के 2 अणु बनते हैं एवं ऊर्जा मुक्त होती है। इसे ग्लाइकोलाइसिस अथवा इस प्रक्रिया की खोज करने वाले वैज्ञानिकों Embden, Meyerhoff एवं Parnas के नाम पर इसे EMP पथ भी कहा जाता है। यह ऑक्सी व अनॉक्सी श्वसन दोनों में समान होती है। इसमें ऑक्सीजन की आवश्यकता नहीं होती। ऑक्सीजन की उपस्थिति में ग्लाइकोलाइसिस में बनने वाला पाइरूविक अम्ल माइटोकोन्ड्रिया में पहुँच कर एसिटाइल कोएन्जाइम ए (Acetyl CoA) का निर्माण करता है जो माइटोकोन्ड्रिया में सम्पन्न होने वाले क्रेब्स चक्र में चला जाता है, जिसे टी सी ए चक्र भी कहा जाता है। ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में यह पाइरूविक अम्ल कोशिका द्रव्य में ही CO_2 एवं एल्कोहॉल का निर्माण करता है व अल्पमात्रा में ऊर्जा मुक्त होती है। श्वसन की क्रिया–विधि को निम्न चित्र 16.1 के अनुसार समझाया जा सकता है।

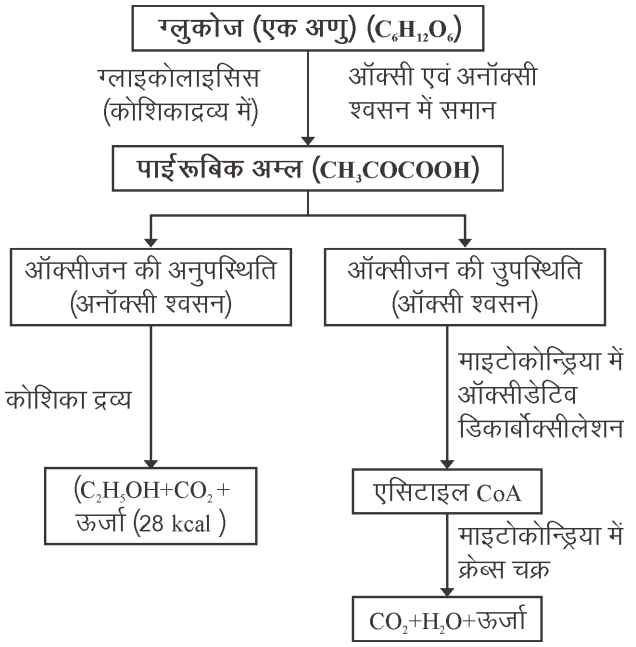

चित्र 16.1 : ऑक्सी एवं अनॉक्सी श्वसन की क्रिया विधि में सम्बन्ध

ग्लाइकोलाइसिस (Glycolysis)

ग्लाइकोलाइसिस शब्द का उद्भव ग्रीक शब्दों ग्लाइकोस (Glycose = Sugar) व लाइसिस (Lysis = Splitting) को मिला कर हुआ है जिसका अर्थ है शर्करा का विघटन। ग्लाइकोलाइसिस की प्रक्रिया को क्रमबद्ध रासायनिक अभिक्रियाओं में गुस्ताव एम्बडेन (G. Embden), ओटो मेयरहॉफ (Otto Meyerhoff) व जे. परनास (J. Parnas) ने समझाया था अतः इनके अन्तिम नाम के पहले अक्षर से इस प्रक्रिया को ई एम पी पथ (EMP pathway) के नाम से भी जाना जाता है। यह ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में कोशिका द्रव्य (Cytosol) में सम्पन्न होने वाली श्वसन की प्रक्रिया का प्रथम पद है जो सभी जीवों में समान होता

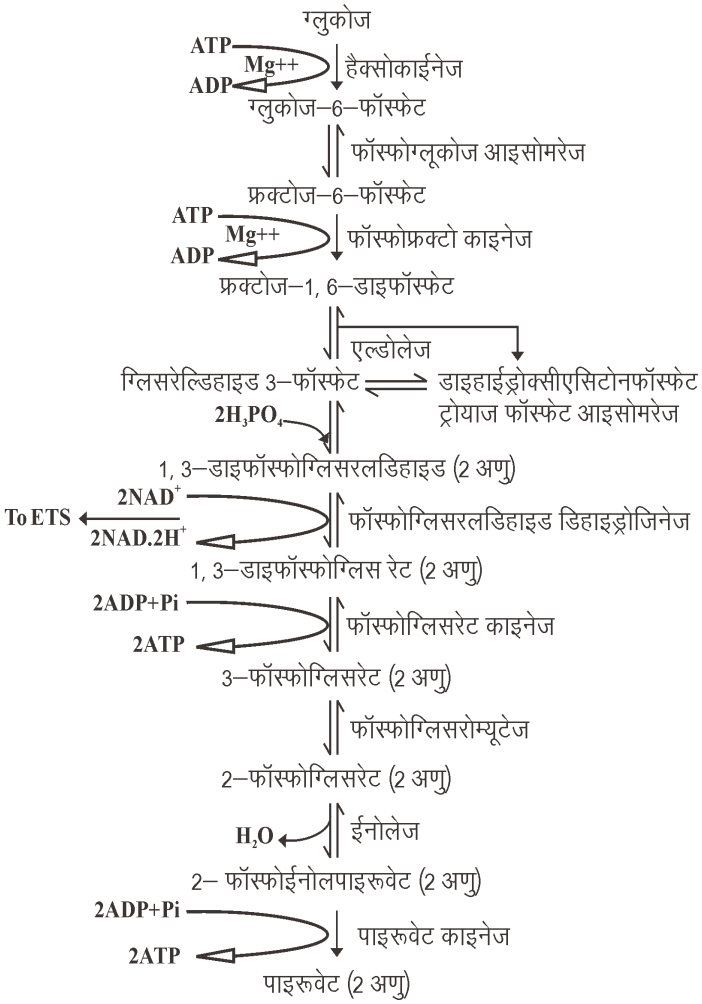

चित्र 16.2 : ग्लाइकोलाइसिस की विभिन्न जैवरासायनिक अभिक्रियाएं

है। अवायवीय श्वसन करने वाले जीवों में श्वसन केवल ग्लाइकोलाइसिस द्वारा ही सम्भव है। अतः ग्लुकोज के अणु का एक श्रेणी में क्रमबद्ध जैव रासायनिक अभिक्रियाओं द्वारा पाइरूविक अम्ल या पाइरूवेट में विघटित होकर ऊर्जा मुक्त करना ग्लाइकोलाइसिस कहलाता है (चित्र 16.2)। पौधों में ग्लुकोज प्रकाश संश्लेषण के अन्तिम उत्पाद सुक्रोज से प्राप्त होता है।

ग्लाइकोलाइसिस में सम्पन्न होने वाली सभी 10 जैवरासायनिक अभिक्रियाओं को निम्न तीन पदों के अन्तर्गत समझाया जा सकता है–

(क) ग्लुकोज का फॉस्फोरिलीकरण (Phosphorylation of glucose)

(ख) फॉस्फोरिलीकृत ग्लुकोज अणु का दो अणु फॉस्फोग्लिसरलडिहाइड में विघटन / विखण्डन (Splitting of phosphorylated glucose molecule into 2 molecules of phosphoglyceraldehyde)

(ग) पाइरूविक अम्ल के दो अणुओं का निर्माण (Formation of 2 molecules of pyruvic acid)

(क) ग्लुकोज का फॉस्फोरिलीकरण (Phosphorylation of glucose) – ग्लाकोलाइसिस के प्रथम चरण में ग्लुकोज अणु एक ए टी पी (ATP) अणु का उपयोग कर ग्लुकोज–6–फॉस्फेट बनाता है। यह ग्लुकोज–6–फॉस्फेट समावयवीकरण की क्रिया द्वारा फ्रक्टोज–6–फॉस्फेट में परिवर्तित हो जाता है। फ्रक्टोज–6–फॉस्फेट एक और ए टी पी अणु का उपयोग कर फ्रक्टोज–1, 6–डाइफॉस्फेट अणु का निर्माण करता है। इस प्रकार ग्लुकोज अणु के फॉस्फोरिलीकरण में दो ए टी पी के अणुओं का उपयोग होता है। ग्लुकोज के फॉस्फोरिलीकरण में होने वाली अभिक्रियाएं निम्नानुसार होती है–

1. प्रथम फॉस्फोरिलीकरण – ग्लुकोज, हेक्सोकाइनेज एन्जाइम व Mg^{++} आयनों की उपस्थिति में ए टी पी (ATP) से क्रिया कर ग्लुकोज–6–फॉस्फेट एवं ए डी पी (ADP) बनाता है। (अभिक्रिया–1)

$$\text{ग्लुकोज} + \text{ATP} \xrightarrow[Mg^{++}]{\text{हेक्साकाइनेज}} \text{ग्लुकोज–6–फॉस्फेट} + \text{ADP} \quad \ldots (1)$$

2. समावयवीकरण – इस प्रक्रिया में फॉस्फोग्लूको आइसोमरेज एन्जाइम की उपस्थिति में ग्लुकोज–6–फॉस्फेट फ्रक्टोज–6–फॉस्फेट में परिवर्तित हो जाता है (अभिक्रिया–2)

$$\text{ग्लुकोज–6–फॉस्फेट} \xrightarrow[\text{आइसोमरेज}]{\text{फॉस्फोग्लूको}} \text{फ्रक्टोज–6–फॉस्फेट} \quad \ldots (2)$$

3. द्वितीय फॉस्फोरिलीकरण – इस प्रक्रिया में फॉस्फोफ्रक्टोकाइनेज एन्जाइम की उपस्थिति में फ्रक्टोज–6–फॉस्फेट, ए टी पी (ATP) के एक अणु से क्रिया कर फ्रक्टोज–1, 6–डाइफॉस्फेट व ए डी पी (ADP) का निर्माण करता है (अभिक्रिया–3)

$$\text{फ्रक्टोज–6–फॉस्फेट} + \text{ATP} \xrightarrow{\text{फॉस्फोफ्रक्टोकाइनेज}} \text{फ्रक्टोज–1, 6–डाईफॉस्फेट} + \text{ADP} \quad \ldots (3)$$

इस प्रकार अभिक्रिया 1 एवं 3 में शर्करा (ग्लुकोज व फ्रक्टोज) के अणु की ATP से क्रिया होने पर ए टी पी से एक फॉस्फेट समूह शर्करा अणु से जुड़ जाता है व ADP का निर्माण होता है। यह प्रक्रिया फॉस्फोरिलीकरण (Phosphorylation) कहलाती है। ग्लाइकोलाइसिस में ग्लुकोज से फ्रक्टोज–1, 6–डाईफॉस्फेट बनने में दो अणु ATP का उपयोग होता है।

(ख) फॉस्फोरिकृत ग्लुकोज अणु का दो अणु फॉस्फोग्लिसरलडिहाइड में विघटन या विखण्डन (Splitting of phosphorylated glucose molecule in 2 molecules of phosphoglyceraldehyde) – इस प्रक्रिया में फ्रक्टोज–1, 6–डाइफॉस्फेट जो कि एक 6 कार्बन परमाणु युक्त अणु है, एल्डोलेज एन्जाइम की उपस्थिति में विखण्डित होकर 3– फॉस्फोग्लिसरलडिहाइड (3-phosphoglyceraldehyde, 3-PGAL) एवं डाइहाइड्रोक्सी एसीटोन फॉस्फेट (3 कार्बन युक्त अणु) का निर्माण करता है (अभिक्रिया–4) ये दोनों यौगिक ट्रायोज फॉस्फेट कहलाते हैं।

$$\text{फ्रक्टोज–1, 6–डाइफॉस्फेट} \xrightarrow{\text{एल्डोलेज}} \begin{cases} \text{3–फास्फोग्लिसरएल्डिहाइड} \\ \rightleftharpoons \text{ट्रायोज फॉस्फेट आइसोमरेज} \\ \text{2–हाइड्रोक्सी एसीटोन फास्फेट} \end{cases} \quad \ldots(4)$$

ये दोनों यौगिक ट्रायोजफॉस्फेट आइसोमरेज एन्जाइम की उपस्थिति में अन्त परिवर्तनीय हैं। इन यौगिकों में से केवल 3-PGAL का ऑक्सीकरण होता है। अतः जैसे–जैसे 3-PGAL का ऑक्सीकरण होता है, 2–हाइड्रोक्सी एसीटोन फॉस्फेट, 3-PGAL में परिवर्तित होता रहता है।

(ग) पाइरूविक अम्ल के दो अणुओं का निर्माण (Formation of two molecules of pyruvic acid) – निम्नलिखित अभिक्रियाओं के द्वारा 3-PGAL (2 अणु) ऑक्सीकृत होकर 2 अणु पाइरूविक अम्ल का निर्माण करता है–

1. 3-PGAL **का फॉस्फोरिलीकरण** – ''ग्लिसरल्डिहाइड–3–फॉस्फेट डिहाइड्रोजिनेस'' एन्जाइम की उपस्थिति में 3-PGAL, H_3PO_4 से अभिक्रिया कर 1,3–डाईफॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड का निर्माण करता है। (अभिक्रिया–5)

$$\underset{\text{(2 अणु)}}{\text{3–फॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड}} + \underset{\text{(2 अणु)}}{H_3PO_4} \xrightarrow[\text{डिहाइड्रोजिनेज}]{\text{ग्लिसरल्डिहाइड–3–फॉस्फेट}} \underset{\text{(2 अणु)}}{\text{1.3–डाईफॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड}} \quad \ldots(5)$$

2. 1, 3–डाईफॉस्फोग्लिसरिक अम्ल का निर्माण – डाईफॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड डिहाइड्रोजिनेज एन्जाइम की उपस्थिति में 1, 3–डाईफॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड ऑक्सीकृत होकर 1, 3–डाई–फॉस्फोग्लिसरेट का निर्माण करता है। (अभिक्रिया–6)

$$\underset{\text{(2 अणु)}}{\text{1, 3–डाईफॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड}} \xrightarrow[\text{डीहाइड्रोजिनेज}]{\text{डाईफास्फोग्लिसरल्डिहाइड}} \underset{\text{(2 अणु)}}{\text{1, 3–डाईफॉस्फोग्लिसरेट}} \quad \ldots(6)$$
$$2NAD^+ \quad 2NADH + 2H^+$$

उपरोक्त अभिक्रिया में NAD^+ हाइड्रोजन ग्राही की तरह कार्य कर $NADH+H^+$ का निर्माण करता है जो ETS में प्रवेश कर ATP का निर्माण करता है।

3. प्रथम ATP निर्माण – इस प्रक्रिया में 1,3–डाईफॉस्फोग्लिसरेट का एक फॉस्फेट समूह फॉस्फोग्लिसरेट काइनेज एन्जाइम की उपस्थिति में ADP से जुड़कर ATP का निर्माण करता है व 3–फॉस्फोग्लिसरेट बनता है (अभिक्रिया–7)

$$\underset{\text{(2 अणु)}}{\text{1, 3–डाईफॉस्फग्लिसरिक अम्ल}} + \underset{\text{(2 अणु)}}{\text{ADP}} \xrightarrow[\text{काइनेज}]{\text{डाईफास्फोग्लिसरेट}} \underset{\text{(2 अणु)}}{\text{3–फॉस्फोग्लिसरेट}} + \underset{\text{(2 अणु)}}{\text{ATP}} \quad ...(7)$$

4. समावयवीकरण – फॉस्फोग्लिसरोम्यूटेज एन्जाइम की उपस्थिति में 3–फॉस्फोग्लिसरेट अम्ल का रूपान्तरण 2–फॉस्फोग्लिसरेट में हो जाता है। (अभिक्रिया–8)

$$\underset{\text{(2 अणु)}}{\text{3–फॉस्फोग्लिसरेट}} \xrightarrow{\text{फॉस्फोग्लिसरोम्यूटेज}} \underset{\text{(2 अणु)}}{\text{2–फॉस्फोग्लिसरेट}} \quad ...(8)$$

5. जल अपघटन – इनोलेज एन्जाइम की उपस्थिति में 2–फॉस्फोग्लिसरेट में से एक अणु जल का निकल कर 2–फॉस्फोइनोल पाइरूवेट का निर्माण होता है। (अभिक्रिया–9)

$$\underset{\text{(2 अणु)}}{\text{2–फॉस्फोग्लिसरेट}} \xrightarrow{\text{इनोलेज}} \underset{\text{(2 अणु)}}{\text{2–फॉस्फोइनोलपाइरूवेट}} \quad ...(9)$$

6. द्वितीय ATP निर्माण – इस प्रक्रिया में 2–फॉस्फोइनोल पाइरूवेट में से पाइरूवेट काइनेज एन्जाइम की उपस्थिति में फॉस्फेट समूह निकल कर पाइरूवेट व ATP का निर्माण होता है। इस प्रकार बनने वाला पाइरूवेट ग्लाइकोलाइसिस का अन्तिम उत्पाद है। प्रत्येक ग्लुकोज अणु से 2 अणु पाइरूवेट के बनते हैं। (अभिक्रिया–10)

$$\underset{\text{(2 अणु)}}{\text{2–फॉस्फोइनोल पाइरूवेट}} + \underset{\text{(2 अणु)}}{\text{ADP}} \xrightarrow{\text{फाइरूवेट काइनेज}} \underset{\text{(2 अणु)}}{\text{पाइरूवेट}} + \underset{\text{(2 अणु)}}{\text{ATP}} \quad ...(10)$$

ग्लाइकोलाइसिस की सम्पूर्ण प्रक्रिया को निम्न समीकरण द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है –

$$C_6H_{12}O_6 + 2ADP + 2Pi + 2NAD \longrightarrow 2Pyruvate + 2ATP + 2NADH + 2H^+ + 2H_2O$$

(ग्लाइकोलाइसिस में अभिक्रिया संख्या 1, 3 व 10 को छोड़कर शेष अभिक्रियाएं उत्क्रमणीय है।)

(घ) ग्लाइकोलाइसिस का सार – ग्लाइकोलाइसिस की प्रक्रिया के मुख्य बिन्दु निम्न हैं–

(1) प्रत्येक ग्लुकोज अणु से 2 अणु पाइरूवेट के बनते हैं।

(2) ग्लाइकोलाइसिस में चार अणु ATP के बनते हैं, परन्तु 2 ATP अणुओं का उपयोग फॉस्फोरिलीकरण में हो जाता है। अतः शुद्ध लाभ 2ATP अणुओं का होता है।

(3) 1, 3–डाईफॉस्फोग्लिसरलडिहाइड के 2 अणुओं से 2 अणु 1, 3–डाईफॉस्फोग्लिसरिक अम्ल के बनते समय 2 अणु NADH + H^+ के बनते हैं।

(4) वायवीय श्वसन में प्रत्येक NADH + H^+ से अणु 3 ATP के बनते हैं (ETS द्वारा) अतः O_2 की उपस्थिति में 6 अतिरिक्त ATP अणुओं का निर्माण होता है।

(5) ग्लाइकोलाइसिस में CO_2 का निर्माण नहीं होता।

पाइरूविक अम्ल का वायवीय ऑक्सीकरण (Aerobic oxidation of pyruvic acid)

कोशिका द्रव्य (Cytosol) में ग्लाइकोलाइसिस की प्रक्रिया द्वारा बनने वाले पाइरूवेट के माइटोकोन्ड्रिया में प्रवेश करने पर श्वसन का दूसरा चरण शुरू होता है। माइटोकोन्ड्रिया में इस पाइरूवेट के तीन कार्बन परमाणुओं में से एक परमाणु कार्बनडाइऑक्साइड CO_2 के रूप में ऑक्सीकृत हो जाता है। ऑक्सीकरण की यह प्रक्रिया ऑक्सीकीय डीकार्बोक्सिलीकरण (Oxidative decarboxylation) कहलाती है। तत्पश्चात् इसका पाइरूविक डीहाड्रोजिनेज एन्जाइम की उपस्थिति में पहले ऑक्सीकरण व बाद में कोएन्जाइम ए (CoA)

से संयुक्त होकर एसिटाइल CoA का निर्माण होता है। इस **अभिक्रिया में 5 सहकारक** (Cofactors) **आवश्यक होते हैं। जो कि कोएन्जाइम** A, NAD $^{+}$, Mg $^{++}$, **थाइमीन पाइरोफास्फेट** (TPP) **एवं लाइपोइक अम्ल** (Lipoic acid) **हैं।** यह एसिटाइल CoA ग्लाइकोलाइसिस व क्रेब चक्र की योजक कड़ी के रूप में कार्य करता है। पाइरूवेट से एसिटाइल CoA बनने की प्रक्रिया निम्नानुसार होती है–

$$\underset{(2\ \text{अणु})}{\text{पाइरूवेट} + 2\,CoA} \xrightarrow[\substack{Mg^{++} \\ \text{पाइरूविक डिहाइड्रोजिनेज}}]{2NAD^{+} \curvearrowright 2NADH + 2H^{+}} \underset{(2\ \text{अणु})}{\text{एसिटाइल } CoA + 2CO_2}$$

अतः पाइरूवेट के 2 अणु वायवीय ऑक्सीकरण के द्वारा दो–दो अणु एसिटाइल CoA, NADH + H^+ (2NADH + $H^+ \times 3 =$ 6 ATP एवं CO_2 के दो अणु बनाते हैं।

क्रेब्स चक्र/सिट्रिक एसिड चक्र/टी सी ए चक्र [Krebs Cycle/Citric Acid Cycle/Tricarboxylic Acid Cycle (TCA Cycle)]

माइटोकोन्ड्रिया में होने वाली इस प्रक्रिया को सबसे पहले ब्रिटिश जैव रसायनशास्त्री सर एच.ए. क्रेब्स (Sir H.A. Krebs) ने 1937 में समझाया था। इन्हीं के सम्मान में इसे क्रेब्स चक्र के नाम से जाना जाता है। इस कार्य के लिए सर क्रेब्स को 1953 में नोबल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। क्रेब्स चक्र का प्रारम्भ सिट्रिक अम्ल के बनने से होता है इस कारण इसे सिट्रिक अम्ल चक्र के नाम से भी जाना जाता है। पाइरूवेट के CO_2 एवं जल में वियोजन को क्रेब्स चक्र द्वारा भली प्रकार समझाया जा सकता है (चित्र 16.3)।

क्रेब्स चक्र में एसिटाइल कोएन्जाइम ए (Acetyl CoA) अपने एसिटाइल समूह के दोनों कार्बन परमाणु क्रेब्स चक्र में बनने वाले ऑक्सेलोएसिटेट को स्थानान्तरित कर देता है जिससे सिट्रेट अम्ल (6 कार्बन परमाणु) का निर्माण होता है तथा CoA पुनः दूसरे एसिटाइल समूह से क्रिया करने के लिए मुक्त हो जाता है।

इस सम्पूर्ण चक्र में 6 कार्बन परमाणु वाले सिट्रेट अम्ल में से दो कार्बन परमाणु CO_2 के रूप में मुक्त होते हैं एवं ऑक्सेलोएसिटेट अम्ल का निर्माण होता है। क्रेब्स चक्र का अन्तिम उत्पाद यह ऑक्सेलोएसिटेट पुनः पदों को निम्नानुसार समझाया जा सकता है–

1. सिट्रेट अम्ल का निर्माण – एसिटाइल CoA क्रेब्स चक्र में बनने वाले ऑक्सेलोएसिटेट से संघनक एन्जाइम (Condensing enzyme) सिट्रेट सिंथटेज की उपस्थिति में क्रिया कर जल–योजन द्वारा सिट्रेट बनाता है। इस प्रक्रिया में CoA पुनः मुक्त हो जाता है। (अभिक्रिया–1)

$$\text{एसिटाइल } CoA + \text{ऑक्सेलोएसिटेट} \xrightarrow[H_2O]{\text{सिट्रेट सिंथटेज}} \text{सिट्रिक अम्ल} + CoA \qquad ...(1)$$

2. सिस–एकोनिटेट का निर्माण – एकोनिटेज एन्जाइम की उपस्थिति में सिट्रेट जल–वियोजन द्वारा सिस–एकोनिटेट का निर्माण करता है।

$$\text{सिट्रेट} \xrightarrow[H_2O]{\text{एकोनिटेज}} \text{सिस–एकोनिटेट} \qquad ...(2)$$

3. आइसोसिट्रेट का निर्माण – एकोनिटेज एन्जाइम की उपस्थिति में सिस–एकोनिटेट के जल–योजन द्वारा आइसोसिट्रेट बनता है।

$$\text{सिस–एकोनिटेट} \xrightarrow[H_2O]{\text{एकोनिटेज}} \text{आइसोसिट्रेट} \qquad ...(3)$$

4. ऑक्सेलो–सक्सिनेट का निर्माण – आइसोसिट्रिक डिहाइड्रोजिनेज एन्जाइम की उपस्थिति में आइसोसिट्रेट ऑक्सीकरण के द्वारा ऑक्सेलो–सक्सिनेट का निर्माण करता है एवं इस क्रिया में मुक्त होने वाले 2 हाइड्रोजन अणु NAD^+ द्वारा ग्रहण किये जाते हैं।

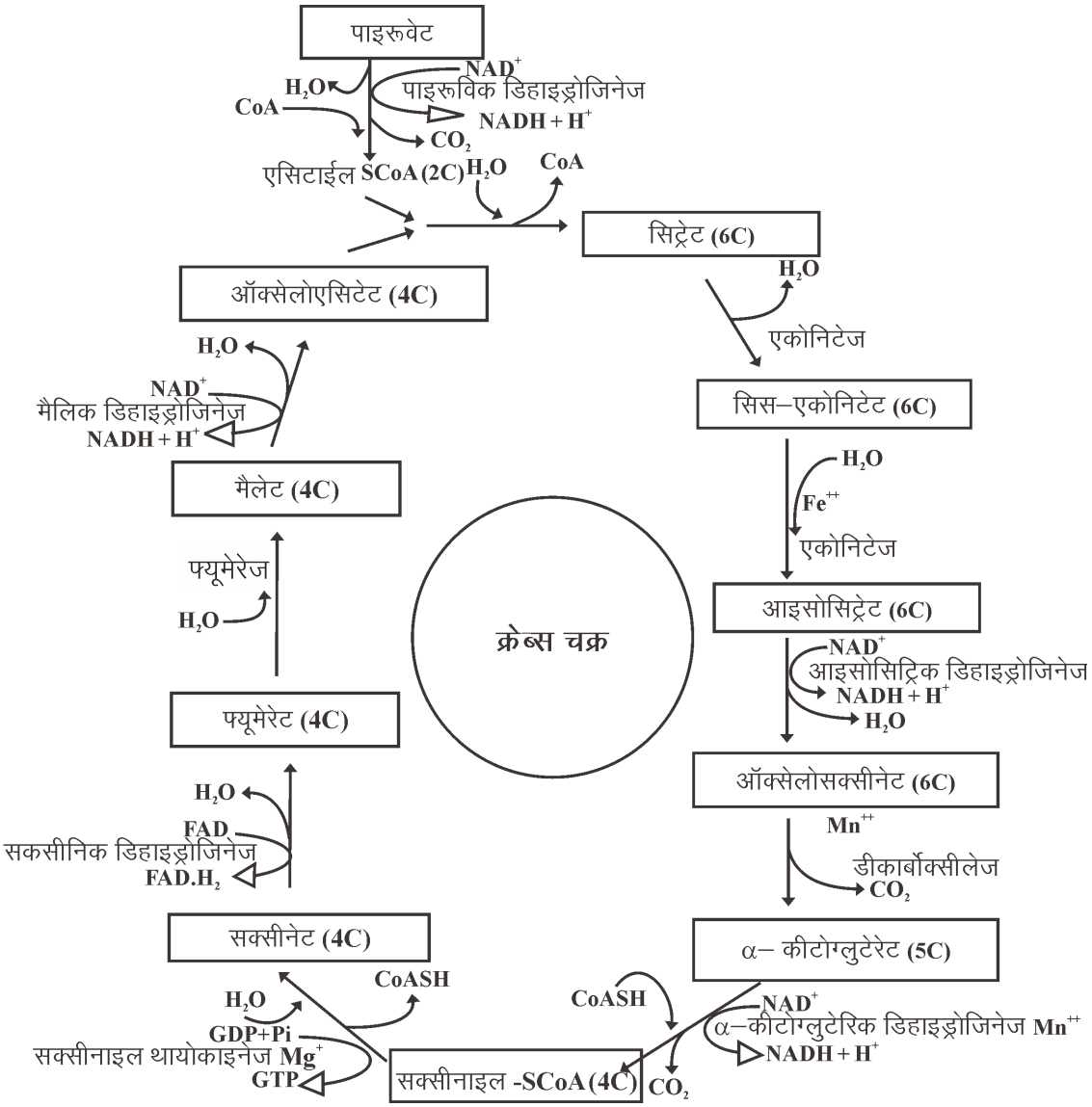

चित्र 16.3 : क्रेब्स चक्र की मुख्य अभिक्रियाएं

$$\text{आइसोसिट्रेट} \xrightarrow[\text{आइसोसिट्रेट डिहाइड्रोजिनेज}]{NAD^+ \quad NADH + H^+} \text{ऑक्सेलो–सक्सिनेट} \qquad ...(4)$$

5. ऑक्सेलो–सक्सिनेट का डीकार्बोक्सिलीकरण (Decarboxylation) – ऑक्सेलोसक्सिनेट का आइसोसिट्रेट डिहाइड्रोजिनेज एन्जाइम की उपस्थिति में डीकार्बोक्सिलीकरण होने पर क्रेब्स चक्र में बनने वाले पहले पाँच कार्बन परमाणु युक्त यौगिक α–कीटोग्लुटेरेट का निर्माण होता है।

$$\text{ऑक्सेजो सक्सिनेट} \xrightarrow[H^+ \quad CO_2]{\text{आइसोसिट्रेट डिहाइड्रोजिनेट}} \alpha\text{–कीटोग्लूटेरेट} \qquad ...(5)$$

6. सक्सिनाइल कोएन्जाइम A का निर्माण – α-कीटोग्लुटेरेट डिहाइड्रोजिनेज संकुल एन्जाइम की उपस्थिति में α-कीटोग्लुटेरेट के ऑक्सीकीय डीकार्बोक्सिलीकरण (Oxidative decarboxylation) द्वारा चार कार्बन युक्त सक्सीनाइल कोएन्जाइम ए (Succinyl CoA) का निर्माण होता है तथा मुक्त होने वाले दोनों हाइड्रोजन परमाणुओं द्वारा NAD^+ का अपचयन $NADH + H^+$ में हो जाता है। इस प्रक्रिया में CO_2 मुक्त होती है।

$$\alpha\text{–कीटोग्लुटेरिक अम्ल} \xrightarrow[\text{NAD}^{+} \;\curvearrowright\; \text{NADH+H}^{+} \;\; \text{NAD}^{+} \;\; \searrow \text{CO}_2]{\alpha\text{–कीटोग्लुटेरेट डिहाइड्रोजिनेज संकुल} \;\; Mg^{++}} \text{सक्सीनाइल कोएन्जाइम A} \quad ...(6)$$

7. सक्सीनेट का निर्माण – सक्सीनिक थायोकाइनेज एन्जाइम की उपस्थिति में सक्सीनाइल कोएन्जाइम A के जल–अपघटन द्वारा सक्सीनेट का निर्माण होता है तथा CoA पुनः मुक्त हो जाता है। इस क्रिया में GTP के रूप में ऊर्जा भी मुक्त होती है जो बाद में ATP बनाती है।

$$\text{सक्सीनाइल कोएन्जाइम A} \xrightarrow[\text{GDP+Pi} \;\curvearrowright\; \text{GTP} \;\; \searrow \text{CoA}]{\text{सक्सीनिकथायोकाइनेज}} \text{सक्सीनेट} \quad ...(7)$$

8. फ्यूमेरेट अम्ल का निर्माण – सक्सीनिक डिहाइड्रोजिनेज संकुल एन्जाइम की उपस्थिति में सक्सीनेट से दो हाइड्रोजन परमाणु निकल जाते हैं जिससे फ्यूमेरेट का निर्माण होता है। इस क्रिया में मुक्त होने वाले हाइड्रोजन परमाणु FAD^+ द्वारा ग्रहण किये जाते हैं।

$$\text{सक्सीनेट} \xrightarrow[\text{FAD}^{+} \;\curvearrowright\; \text{FADH}_2]{\text{सक्सीनेट डिहाइड्रोजिनेज}} \text{फ्यूमेरेट} \quad ...(8)$$

9. मेलेट का निर्माण – फ्यूमेरेज एन्जाइम की उपस्थिति में जल–योजन द्वारा फ्यूमेरेट, मैलेट में परिवर्तित हो जाता है।

$$\text{फ्यूमेरेट} \xrightarrow[\nearrow \text{H}_2\text{O}]{\text{फ्यूमेरेज एन्जाइम}} \text{मैलेट} \quad ...(9)$$

10. ऑक्सेलो एसिटेट का निर्माण – क्रेब्स चक्र के अन्तिम पद में मैलिक डिहाड्रोजिनेज एन्जाइम की उपस्थिति में मैलेट में से 2 हाइड्रोजन परमाणु वियोजित होकर ऑक्सेलोएसिटेट का निर्माण होता है। जो एसिटाइल CoA से क्रिया कर क्रेब्स चक्र पुनः आरम्भ करता है।

$$\text{मैलेट अम्ल} \xrightarrow[\text{NAD}^{+} \;\curvearrowright\; \text{NADH + H}^{+}]{\text{मैलिक डिहाइड्रोजिनेज}} \text{ऑक्सेलोएसिटेट} \quad ...(10)$$

सम्पूर्ण क्रेब्स चक्र को निम्न समीकरण एवं चित्र 16.4 द्वारा समझाया जा सकता है–

$$\underset{\text{Acetyl – CoA}}{CH_3\,CO\text{-}SCoA} + 3NAD^{+} + FAD + GDP + Pi + 2H_2O \xrightarrow{\text{क्रेब्स चक्र}} 2CO_2 + CoA - SH + 3NADH + FADH_2 + GTP + 2H^{+}$$

चित्र 16.4 : क्रेब्स चक्र का सार

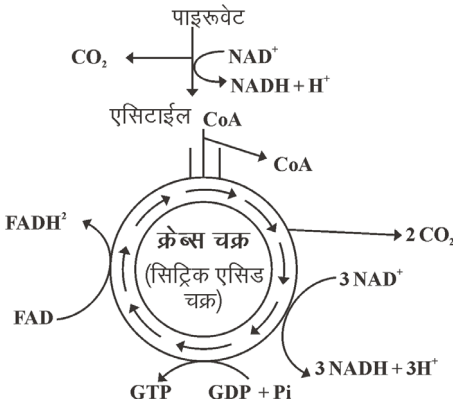

क्रेब्स का महत्त्व

(i) इस चक्र से ATP के अणुओं का निर्माण होता है, जिससे विभिन्न कार्यों को करने के लिए ऊर्जा मिलती है।

(ii) इस चक्र में कई मध्यवर्ती यौगिकों का निर्माण होता है, जिनका अन्य जैव अणुओं के संश्लेषण में उपयोग होता है। उदाहरण के लिए सक्सीनायल कोएन्जाइम A, पर्णहरित के संश्लेषण के लिए प्रारम्भिक अणु हैं। α-कीटो ग्लूटेरेट, पाइरूवेट एवं ऑक्सेलोएसिटेट से एमीनो अम्लों का निर्माण होता है।

सारणी 16.2 : ग्लुकोज के वायवीय ऑक्सीकरण का सार (Summary of aerobic respiration of glucose)

क्र.स.	प्रक्रिया	उत्पन्न ऊर्जा
1.	**ग्लाइकोलाइसिस** ग्लुकोज $(C_6H_{12}O_6 \longrightarrow$ पाइरूवेट $+ 2H_2$	8 or 6 ATP**
2.	**मध्यस्थ चरण** CoA ↓ 2 पाइरूवेट अम्ल $\longrightarrow$ 2 एसिटाइल CoA $+ 4H^+ + 2CO_2$	6 ATP
3.	**क्रेब्स चक्र** 2 एसिटाइल CoA $+ 6H_2O \longrightarrow$ CoA $+ 16H^+ + 4CO_2$ $24\ H^+ 6O_2 \longrightarrow 12H_2O$ $(C_6H_{12}O_6 + 6O_2) \longrightarrow 6CO_2 + 6H_2O$	24 ATP 38 or 36 ATP*

* क्योंकि ग्लुकोज के एक अणु से 2 अणु पाइरूवेट के बनते हैं। अतः $NADH+H^+$ व CO_2 के दो–दो अणु पाइरूवेट से एसिटाइल CoA बनने पर मुक्त होते हैं।

** ग्लाइकोलाइसिस में बनने वाले $2NADH+H^+$ के अणु यदि मैलेट–एस्पारटेट शटल (Malate Aspartate shuttle) के द्वारा माइटोकोन्ड्रिया में होने वाले ETS में प्रवेश करते हैं तो 6 ATP के अणु बनते हैं। अगर ये $NADH+H^+$ के दो अणु ग्लिसरोल–फॉस्फेट शटल (Glycerol Phosphate shuttle) के द्वारा माइटोकोन्ड्रिया में प्रवेश करते हैं तो इलेक्ट्रोंस के द्वारा FAD^+ का अपचयन होता है जिससे केवल चार अणु ATP बनते हैं जिससे ऑक्सीश्वसन में कुल 36 ATP के अणु बनते हैं।

इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र (Electron Transport System, ETS)

क्रेब्स चक्र के अन्त में ग्लुकोज का पूर्ण ऑक्सीकरण तो हो जाता है परन्तु ऊर्जा इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र के द्वारा $NADH+H^+$ एवं $FADH_2$ के ऑक्सीकरण के बाद ही मुक्त होती है। अतः इस प्रक्रिया में ऑक्सीकरण को इलेक्ट्रॉन्स के आधार पर समझा जाना चाहिए। इस प्रकार की प्रक्रिया में इलेक्ट्रॉन्स का किसी यौगिक में जुड़ना अपचयन एवं किसी यौगिक से इलेक्ट्रॉन्स का हटना ऑक्सीकरण कहलाता है। अतः श्वसन में होने वाली वह उपापचयी (Metabolic) क्रिया जिसमें इलेक्ट्रॉन एक श्रेणी बद्ध निश्चित क्रम में एक वाहक से दूसरे वाहक में स्थानान्तरित होते हैं इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र (ETS) कहलाती हैं। यह इलेक्ट्रॉन्स/हाइड्रोजन आयन कई मध्यस्थ वाहकों (Intermediate carriers) के द्वारा O_2 से जुड़कर जल का निर्माण करते हैं तथा इस प्रक्रिया के दौरान ATP का निर्माण होता है (सारणी 16.2)। इस क्रिया में भाग लेने वाले सभी एन्जाइम माइटोकोन्ड्रिया की आन्तरिक झिल्ली पर पाये जाने वाले F_1 कणों (F_1 particles) में पाये जाते हैं (चित्र 16.5)।

इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र में $NADH+H^+$ एवं $FADH_2$ से इलेक्ट्रॉन का ऑक्सीकरण एक निश्चित क्रम में होता है जिसे निम्नानुसार समझा जा सकता है–

1. क्रेब्स चक्र में माइटोकोन्ड्रिया की मेट्रिक्स में बनने वाले $NADH+H^+$ का NADH डिहाइड्रोजिनेज एन्जाइम द्वारा NAD^+ में ऑक्सीकरण हो जाता है एवं इस क्रिया में मुक्त होने वाले इलेक्ट्रॉन माइटोकोन्ड्रिया की आन्तरिक झिल्ली पर पाये जाने वाले NADH यूबीक्विनॉन ऑक्सीडोरिडक्टेज [संकुल-I] (Complex-I)] द्वारा ग्रहण कर लिये जाते है। यह [संकुल-I] सक्सीनेट–यूबीक्विनॉन आक्सीडोरिडक्टेज [संकुल-II] (Complex-II)] द्वारा ऑक्सीकृत होने वाले सक्सीनिक अम्ल से मुक्त होने वाले इलेक्ट्रॉन्स जो $FADH_2$ द्वारा ग्रहण किये जाते हैं, को भी ग्रहण करता है।
2. इस प्रकार पूर्ण अपचयित यूबीक्विनॉन (यूबीक्विनॉल) इलेक्ट्रॉन्स का स्थानान्तरण साइटोक्रोम b एवं c_1, संकुल-III [cytochrome b and c_1 complex (complex-III)] द्वारा साइटोक्रोम-C को कर देता है। **यह साइटोक्रोम**

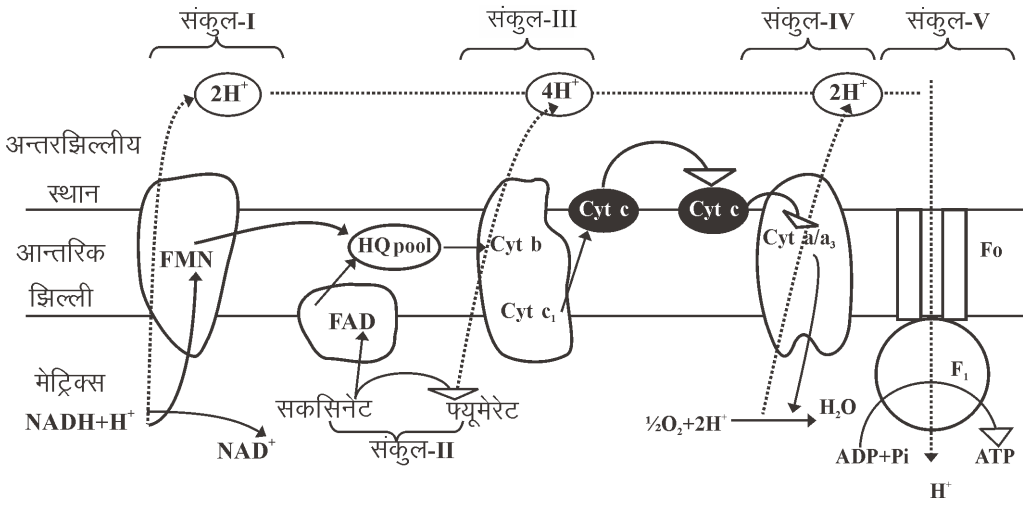

चित्र 16.5 : इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र का आरेखी चित्र

(C) **माइटोकोन्ड्रिया की आन्तरिक झिल्ली की बाहरी सतह से सम्बन्धित चल (गतिशील) प्रोटीन है जो इलेक्ट्रॉन्स की संकुल**-III **से संकुल**-IV **पर स्थानान्तरित करती है।**

साइटोक्रोम-C ऑक्सीडेज संकुल जिसमें साइटोक्रोम a एवं a_3 तथा दो कॉपर केन्द्र पाये जाते हैं संकुल-IV (Complex-IV) कहलाता है।

3. इलेक्ट्रॉन परिवहन श्रृंखला में इलेक्ट्रॉन विभिन्न वाहकों द्वारा संकुल-I से संकुल-IV तक पहुँचने पर ये ए टी पी सिंथेज संकुल (ATP synthase complex) से जुड़ कर ADP एवं अकार्बनिक फॉस्फेट [inorganic phosphate (Pi)] से ATP का निर्माण करते हैं। संकुल-V (Complex-V) के दो प्रमुख घटक में F_1 एवं F_0 होते हैं।
4. इस प्रक्रिया में बनने वाले ATP अणुओं की संख्या इलेक्ट्रॉन दाता की प्रकृति पर निर्भर करती है। $NADH+H^+$ से 3 ATP एवं $FADH_2$ से 2 ATP अणु का निर्माण होता है।
5. ऑक्सीजन इस क्रिया में अन्तिम हाइड्रोजन ग्राही की तरह कार्य करता है।
6. ATP का फॉस्फोरिलीकरण ऑक्सीजन की उपस्थिति में होने के कारण इस प्रक्रिया को ऑक्सीकीय फॉस्फोरिलीकरण (Oxidative phosphorylation) कहा जाता है।

ऑक्सीकीय फॉस्फोरिलीकरण का रसायनपरासरी सिद्धांत (Chemiosmotic theory of oxidative phosphorylation)

प्रकाश संश्लेषण एवं श्वसन में ऊर्जा का रूपान्तरण ATP में होता है, पर जब यह ATP टूटती है (विघटित होती है) तो अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में ऊर्जा (7.3 K.cal) मुक्त होती है, ADP एवं Pi का निर्माण होता है। जिसका उपयोग विशिष्ट प्रकार के एन्जाइमों की उपस्थिति में कोशिका में होने वाली क्रियाओं में कर लिया जाता है। इस कारण ATP को कोशिका की 'सार्वत्रिक ऊर्जा मुद्रा' (Universal energy currency) भी कहा जाता है। श्वसन एवं प्रकाश संश्लेषण में जिन प्रक्रियाओं के द्वारा इस ATP का निर्माण होता है उनको क्रमशः ऑक्सीकीय फॉस्फोरिलीकरण (Oxidative phosphorylation) एवं प्रकाशीय फॉस्फोरिलीकरण (Photophosphorylation) कहते हैं।

पीटर मिशेल (Peter Mitchell) ने 1961 में ऑक्सीकीय फॉस्फोरिलीकरण व प्रकाशीय फॉस्फोरिलीकरण की प्रक्रियाओं में ऑक्सीकारक एवं फॉस्फोरिलीकारक एन्जाइमों के मध्य परोक्ष/अप्रत्यक्ष (Indirect) अन्तर्सम्बन्धों (Interaction) पर आधारित ATP संश्लेषण में इलेक्ट्रॉन स्थानान्तरण की क्रियाविधि का प्रतिपादन किया।

इस सिद्धान्त के अनुसार धनावेशित प्रोटोन तथा हाइड्रोजन आयनों (H^+) का माइट्रोकोन्ड्रिया, हरितलवक (Chloroplast) एवं जीवाणु झिल्लियों के आर–पार गमन/स्थानान्तरण श्वसन तथा प्रकाश संश्लेषण में प्रयुक्त एन्जाइम–श्रृंखलाओं द्वारा होने वाले इलेक्ट्रॉन्स के प्रवाह द्वारा नियंत्रित होता है। इसके कारण झिल्ली के दोनों तरफ (आर–पार) एक वैद्युत–रासायनिक प्रोटोन प्रवणता (Electrochemical proton gradient) उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार उत्पन्न वैद्युत–रासायनिक प्रोटोन प्रवणता के दो प्रमुख घटक होते हैं।

1. झिल्ली के आर–पार हाइड्रोजन आयनों की सान्द्रता अथवा pH में अन्तर।
2. झिल्ली के आर–पार वैद्युत विभव (Electric potential) में अन्तर।

मिशेल के अनुसार ये दोनों घटक मिलकर प्रोटोन मोटिव बल (Proton motive force) का निर्माण करते हैं। इस प्रक्रिया

को समझने के लिए आधुनिक अवधारणा का प्रतिपादन मिशेल द्वारा किया गया। मिशेल को इस कार्य के लिए 1978 में रसायन शास्त्र के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

पाइरूविक अम्ल का ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में विखण्डन (Breakdown of pyruvic acid in absence of oxygen)

ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में पाइरूविक एसिड एवं एन ए डी एच ($NADH+H^+$) का ऑक्सीकरण माइटोकोन्ड्रिया में सम्पन्न होने वाले क्रेब्स चक्र व इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र (ETS) के द्वारा नहीं होता है। अतः ग्लुकोज से ग्लाइकोलाइसिस में बनने वाला पाइरूविक अम्ल कोशिका द्रव्य में एकत्रित होने लगता है। इस अवस्था में पादप किण्वन की क्रिया द्वारा पहले डीकार्बोक्सिलीकरण (Decarboxylation) की क्रिया द्वारा एसीटलडिहाइड का निर्माण करता है तथा CO_2 मुक्त होती है। इस प्रकार एसीटलडिहाइड खुद अपचयित होकर एल्कोहल बनाता है तथा ($NADH+H^+$) का ऑक्सीकरण NAD^+ में कर देता है (चित्र 16.6) ये दोनों क्रियाएं पाइरूविक एसिड डीकार्बोक्सीलेज व एल्कोहल डीहाइड्रोजिनेज एन्जाइमों द्वारा उत्प्रेरित होती है।

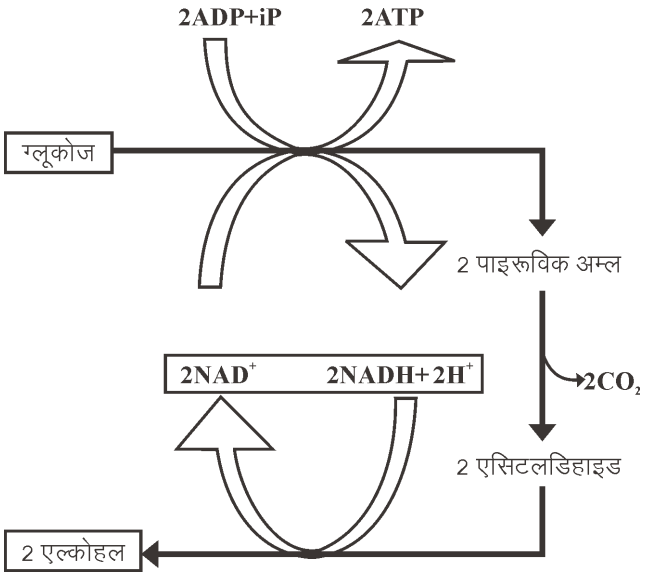

चित्र 16.6 : पाइरूविक अम्ल का ऑक्सीजन की अनुपस्थित में विखण्डन

किण्वन (Fermentation)

किण्वन अधिकांश जीवाणुओं व कवकों (Fungi) में ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में होने वाली क्रिया है जिसमें शर्करा (ग्लुकोज) के अणु का अपूर्ण ऑक्सीकरण होता है, जिससे एल्कोहल अथवा कार्बोक्सिलिक अम्लों का निर्माण होता है एवं CO_2 मुक्त होती है। पाश्चर ने सन् 1857 में यह सिद्ध किया कि एल्कोहॉलिक किण्वन यीस्ट (Yeast) कोशिकाओं की उपापचयी क्रियाओं द्वारा होता है। बुकनर (Buchner) ने 1897 में यीस्ट कोशिकाओं से जाइमेज (Zymase) नामक एन्जाइम को पृथक किया जो जीवित कोशिकाओं के बिना भी किण्वन करने में सक्षम था।

किण्वन क्रिया में बनने वाले उत्पाद के आधार पर किण्वन निम्न प्रकार के हो सकते हैं–

1. एल्कोहॉलीय किण्वन (Alcoholic fermentation) – यह क्रिया यीस्ट, कुछ कवक तथा कुछ उच्च वर्ग के पौधों में मिलती है। यह अनॉक्सी श्वसन का सामान्यतः पाया जाने वाला रूप है। ग्लाइकोलाइसिस में बनने वाले पाइरूविक अम्ल से एल्कोहल का निर्माण दो पदों में पूर्ण होता है–

(अ) पाइरूविक अम्ल के डीकार्बोक्सिलीकरण (Decarboxylation) से एसिटल्डिहाइड बनता है तथा CO_2 मुक्त होती है। यह क्रिया पाइरूविक डीकार्बोक्सिलेज एन्जाइम की उपस्थिति में सम्पन्न होती है।

$$\text{पाइरूविक अम्ल} \xrightarrow{\text{पाइरूविक डीकार्बोक्सिलेज}} \text{एसिटल्डिहाइड} + CO_2$$

(ब) एन्जाइम एल्कोहॉल डीहाइड्रोजिनेज तथा $NADH+H^+$ की उपस्थिति में एसिटल्डिहाइड का अपचयन होकर एल्कोहल, CO_2 तथा NAD^+ का उत्पादन होता है।

$$\text{एसिटल्डिहाइड} + \text{NADH+H}^+ \xrightarrow[\text{डीहाइड्रोजिनेज}]{\text{एल्कोहल}} \text{एथिल एल्कोहल} + \text{NAD}^+$$

2. लेक्टिक अम्ल किण्वन (Lactic acid fermentation) – यह क्रिया जीवाणु (*लेक्टोबेसिलस, क्लोस्ट्रीडियम* आदि) में मिलती है। इसमें पाइरूविक अम्ल तथा NADH+H द्वारा एन्जाइम लेक्टिक डीहाइड्रोजिनेज की उपस्थिति में लेक्टिक अम्ल में अपचयन होता है तथा आक्सीकृत NAD^+ उत्पादित होता है।

$$\text{पाइरूविक अम्ल} + \text{NADH+H}^+ \xrightarrow[\text{डीहाइड्रोजिनेज}]{\text{लेक्टिक अम्ल}} \text{लेक्टिक अम्ल} + \text{NAD}^+$$

3. एसिटिक अम्ल किण्वन (Acetic acid fermentation) – यह क्रिया *एसिटोबेक्टर एसीटी* नाम जीवाणु में होती है। इस क्रिया में पहले पाइरूविक अम्ल से एसिटल्डिहाइड तथा बाद में एसिटिक अम्ल बनता है।

$$\text{पाइरूविक अम्ल} \longrightarrow \text{एसिटल्डिहाइड} + CO_2$$

$$\text{पाइरूविक अम्ल} \xrightarrow[-2H]{+H_2O} \text{एसिटिक अम्ल}$$

4. ब्यूटाइरिक अम्ल किण्वन (Butyric acid fermentation) – *बेसिलस ब्यूटारिकस* तथा *क्लोस्ट्रीडियम ब्यूटयरिकस* जीवाणु में पाया जाता है। इसमें पाइरूविक अम्ल से पहले एसिटोएसिटिक अम्ल तथा बाद में ब्यूटाइरिक अम्ल बनता है।

$$\text{पाइरूविक अम्ल} \xrightarrow[-CO_2]{+H_2O} \text{एसिटोएसिटिक अम्ल}$$

$$\text{एसिटोएसिटिक अम्ल} \xrightarrow[-H_2O]{+4H} \text{ब्यूटाइरिक अम्ल}$$

इस प्रकार के श्वसन में शर्करा के एक अणु से ATP के दो अणु प्राप्त होते हैं। ग्लाइकोलाइसिस में 8 ATP अणुओं की प्राप्ति होती है जिसमें से 6 ATP, $NADH+H^+$ के ETS में जाने से प्राप्त होते हैं। इसमें ETS नहीं होने के कारण 6 ATP अणु नहीं बनते हैं। अतः ATP के कुल दो अणु ही प्राप्त होते हैं।

श्वसन तथा किण्वन में अन्तर

(Difference between respiration and fermentation) –

क्र.सं.	श्वसन	किण्वन
1.	यह ऑक्सीजन की उपस्थिति या अपरिहार्य स्थिति में ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में होती है।	इसमें ऑक्सीजन की आवश्यकता नहीं होती है।
2.	यह क्रिया केवल जीवित कोशिकाओं में ही होती है।	इसके लिए जीवित कोशिका आवश्यक नहीं होती श्वसन पदार्थ, सूक्ष्मजीव कवक तथा एन्जाइम का होना आवश्यक है।
3.	इसमें ग्लुकोज का पूर्ण ऑक्सीकरण होने पर CO_2 तथा पानी और अपूर्ण ऑक्सीकरण होने पर एल्कोहल एवं CO_2 बनते हैं।	इसमें ग्लुकोज का अपूर्ण ऑक्सीकरण होता है तथा एल्कोहल अथवा कार्बनिक अम्ल एवं CO_2 बनते हैं।
4.	अधिक ऊर्जा मुक्त होती है।	बहुत कम ऊर्जा मुक्त होती है।

शर्करा के विघटन के कुछ अन्य पथ

(Some other pathways of glucose breakdown)

1. पेन्टोज फॉस्फेट पथ [Pentose phosphate pathway (PPP)] – पादपों में कार्बोहाइड्रेट्स के ऑक्सीकरण की सामान्य प्रक्रियाओं, ग्लाइकोलाइसिस एवं क्रेब्स चक्र के अतिरिक्त भी कार्बोहाइड्रेट्स का ऑक्सीकरण कर ऊर्जा उत्पन्न करने की प्रक्रिया पाई

जाती है जिसे पेन्टोज फॉस्फेट पथ कहा जाता है। इस प्रक्रिया में हेक्सोज शर्करा का विघटन एक मध्यवर्ती (Intermediate) पाँच कार्बन परमाणु वाले शर्करा में होता है इस कारण इसे पेन्टोज फॉस्फेट पथ कहा जाता है। इसका सर्वप्रथम अध्ययन वारबर्ग एवं डिकिन्स (Warburg and Dickens, 1938) ने किया। इस पथ की विभिन्न रासायनिक अभिक्रियाओं को समझाने का श्रेय होरेकर (Horecker), रेकर (Racker, 1954) व साथियों को जाता है। इस पथ को हेक्सोज मोनोफॉस्फेट शंट एवं फॉस्फोग्लुकोनेट पथ अथवा वारबर्ग, डिकिन्स पथ के नाम से भी जाना जाता है। यह पथ कोशिका द्रव्य में सम्पन्न होता है। इस प्रक्रिया को निम्न पदों में समझाया जा सकता है–

(i) **ग्लुकोज अणु का फॉस्फोरिलीकरण** – ग्लुकोज अणु का फॉस्फोरिलीकरण ATP द्वारा होता है।

$$\text{ग्लुकोज} + \text{ATP} \longrightarrow \text{ग्लुकोज–6–फॉस्फेट} + \text{ADP}$$

(ii) **ग्लुकोज–6–फॉस्फेट का ऑक्सीकरण** – ग्लुकोज–6–फॉस्फेट का तत्काल फॉस्फोग्लुकोनिक अम्ल में ऑक्सीकरण हो जाता है।

$$\text{ग्लुकोज–6–फॉस्फेट} \xrightarrow[H_2O \quad NADP \quad NADPH+H^+]{\text{ग्लुकोज–6–फॉस्फेट डीहाइड्रोजिनेज}} \text{फॉस्फोग्लुकोनिक अम्ल}$$

(iii) **फॉस्फोग्लुकोनिक अम्ल का ऑक्सीकीय डीकार्बोक्सिलीकरण** – फॉस्फोग्लुकोनिक अम्ल डिहाइड्रोजिनेज एन्जाइम की उपस्थिति में फॉस्फोग्लुकोनिक अम्ल के ऑक्सीकीय डीकार्बोक्सिलीकरण के द्वारा राइबुलोज–5–फॉस्फेट (पेन्टोज शर्करा) का निर्माण करता है एवं CO_2 मुक्त होती है।

$$\text{6–फॉस्फोग्लुकोनिक अम्ल} \xrightarrow{\text{फॉस्फोग्लुकोनिक अम्ल डिहाइड्रोजिनेज}} \text{राइबुलोज–5–फॉस्फेट} + CO_2$$

इस राइबुलोज–5–फॉस्फेट से कई क्रमागत समावयवी अभिक्रियाओं द्वारा फॉस्फोरिलीकृत मध्यवर्ती उत्पाद बनते हैं। जिनका मुख्य उद्देश्य ग्लुकोज–6–फॉस्फेट को पूर्ण रूप से विघटित करना है। इस प्रक्रिया में मुक्त होने वाले प्रत्येक CO_2 अणु के साथ 2 अणु $NADPH+H^+$ बनते हैं। ग्लुकोज अणु में 6 कार्बन परमाणु होते हैं, अतः इसके पूर्ण विघटन से 6 अणु CO_2 के मुक्त होंगे एवं 12 $NADPH+H^+$ अणु बनेंगे। जो इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र के द्वारा 36 ATP अणुओं का निर्माण करते हैं। इस चक्र में बनने वाले राइबोज–5–फॉस्फेट से विभिन्न पदार्थों का संश्लेषण होता है, जैसे DNA, RNA, ATP, NAD, FAD, CoA इत्यादि। लिग्निन तथा अन्य यौगिकों के लिए इरिथ्रोज शर्करा आवश्यक होती है।

2. एन्टर–डॉडोरोफ पथ (Enter-Doudoroff pathway) – यह पथ शर्करा के विघटन से पाइरूविक अम्ल बनने तक की क्रिया दर्शाता है। इसका सर्वप्रथम अध्ययन *स्यूडोमोनास* (Pseudomonas) नामक जीवाणु में किया गया। इस पथ में बनने वाले मध्यस्थ पदार्थ सामान्य ग्लाइकोलाइसिस में बनने वाले पदार्थ से भिन्न होते हैं। प्रमुख मध्यस्थ पदार्थ फॉस्फोग्लूकोनिक अम्ल होता है जिससे पाइरूविक अम्ल बनता है।

श्वसर का सार एवं अन्य श्वसन का श्वसन मार्ग में प्रवेश

वसा, कार्बोहाइड्रेट एवं प्रोटीन के विघटन से बनने वाले सरल पदार्थों के श्वसन में प्रवेश को चित्र 16.7 में दर्शाया गया है–

श्वसन गुणांक (Respiratory Quotient) – श्वसन में पादप ऑक्सीजन का उपभोग करते हैं तथा कार्बन डाईऑक्साइड मुक्त करते हैं। श्वसन में मुक्त होने वाली कार्बन डाईऑक्साइड (CO_2) एवं प्रयुक्त होने वाली ऑक्सीजन (O_2) के आयतन का अनुपात श्वसन में प्रयुक्त होने वाले क्रियाधार की प्रकृति पर निर्भर करता है। अतः श्वसन में मुक्त होने वाली CO_2 एवं उपभोग होने वाली O_2 के आयतन का अनुपात श्वसन गुणांक कहलाता है। श्वसन गुणांक का मापन गेनोंग्स श्वसन मापी द्वारा किया जाता है।

$$\text{अतः श्वसन गुणांक} = \frac{\text{श्वसन में मुक्त होने वाली कार्बन डाईऑक्साइड } (CO_2) \text{ का आयतन}}{\text{श्वसन में प्रयुक्त होने वाली ऑक्सीजन } (O_2) \text{ का आयतन}}$$

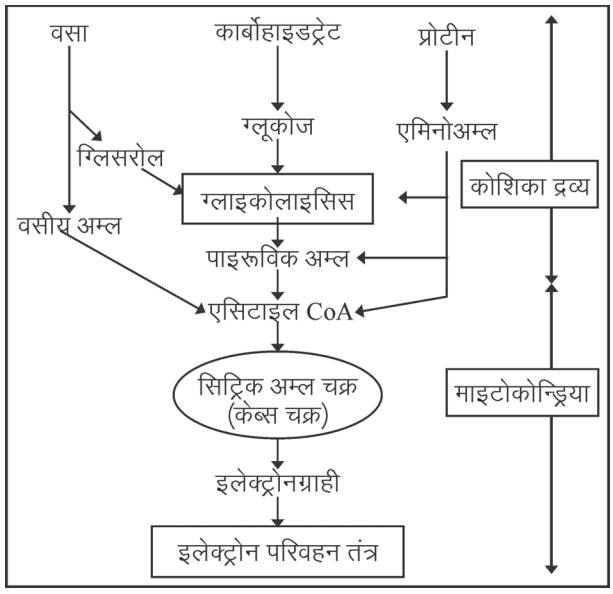

चित्र 16.7 : कोशिकीय श्वसन की सम्पूर्ण प्रक्रिया का आरेखी चित्र

श्वसन में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न क्रियाधारों के श्वसन गुणांक भी भिन्न–भिन्न होते हैं जिन्हें निम्नानुसार समझाया गया है–

(i) **कार्बोहाइड्रेट्स का श्वसन गुणांक** – श्वसन की प्रक्रिया में क्रियाधार जब कार्बोहाइड्रेट होते हैं एवं इनका पूर्ण ऑक्सीकरण होता है तो श्वसन गुणांक सदैव इकाई (1) होता है, क्योंकि इस प्रक्रिया में विमुक्त होने वाली कार्बन डाइऑक्साइड एवं प्रयुक्त होने वाली ऑक्सीजन का आयतन सदैव समान होता है।

$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \longrightarrow 6CO_2 + 6H_2O + \text{ऊर्जा}$$

$$\text{श्वसन गुणांक} = \frac{\text{श्वसन में मुक्त होने वाली } CO_2 \text{ का आयतन}}{\text{श्वसन में प्रयुक्त होने वाली } O_2 \text{ का आयतन}} = \frac{6CO_2}{6O_2} = 1.0$$

(ii) **वसा का श्वसन गुणांक** – तैलीय बीजों के अंकुरण के समय श्वसन की क्रिया में वसा क्रियाधार होती है। वसा के अणु में कार्बन की तुलना में ऑक्सीजन की मात्रा कम होती है। इस कारण वसा के ऑक्सीकरण के लिए ऑक्सीजन की अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है। अतः वसा का श्वसन गुणांक सदैव एक से कम होता है।

$$C_{51}H_{98}O_6 + 145O_2 \longrightarrow 102CO_2 + 98H_2O$$

$$\text{अतः श्वसन गुणांक} = \frac{102CO_2}{145O_2} = 0.7$$

(iii) **प्रोटीन्स का श्वसन गुणांक** – प्रोटीन्स अणुओं में भी वसा की तरह ऑक्सीजन की मात्रा कार्बन की तुलना में कम होती है। अतः प्रोटीन्स के ऑक्सीकरण में भी अधिक O_2 की आवश्यकता होती है। प्रोटीन्स श्वसन की क्रिया में क्रियाधार की तरह कार्य केवल कार्बोहाइड्रेट व वसा की अनुपस्थिति में ही करते हैं। प्रोटीन्स का श्वसन गुणांक एक से कम होता है।

(iv) **कार्बोक्सिलिक अम्लों का श्वसन गुणांक** – माँसलोद्भिद (Succulents) पादपों जैसे नागफनी (Opuntia) आदि में श्वसन में क्रियाधार कार्बोक्सिलिक अम्ल होते हैं जिनके अणुओं में कार्बन की तुलना में ऑक्सीजन की मात्रा अधिक होती है। इस कारण श्वसन में इनके ऑक्सीकरण के लिए कम ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है अतः इनका श्वसन गुणांक सदैव एक से अधिक होता है।

$$2(COOH_2) + O_2 \longrightarrow 4CO_2 + 2H_2O$$

आक्सेलिक अम्ल

$$\text{अतः श्वसन गुणांक} = \frac{4CO_2}{O_2} \quad 4.0$$

सिट्रिक अम्ल व मैलिक अम्ल का श्वसन गुणांक 1.33 होता है।

(v) **अवायवीय श्वसन में श्वसन गुणांक** – अवायवीय श्वसन में कार्बनडाइऑक्साइड तो मुक्त होती है परन्तु ऑक्सीजन

का अवशोषण नहीं होता है। अतः इस प्रकार की क्रियाओं में श्वसन गुणांक अनन्त (∞) होता है।

$$C_6H_{12}O_6 \xrightarrow{\text{जाइमेज}} 2C_2H_5OH + 2CO_2 + \text{ऊर्जा}$$

$$\text{अतः श्वसन गुणांक} \xrightarrow[0\ (\text{शून्य})\ O_2]{CO_2} = \text{अन्नत } (\infty)$$

श्वसन का महत्व

1. श्वसन में उत्पन्न ऊर्जा पौधों की विभिन्न उपपाचयी प्रक्रियाओं में उपयोग की जाती है।
2. इस क्रिया के फलस्वरूप रासायनिक पदार्थ बनते हैं जो कोशिका अवयव के लिए आवश्यक है।
3. इस क्रिया में निकलने वाली CO_2 से वायुमण्डल संतुलित रहता है।
4. इस क्रिया में जटिल अघुलनशील भोज्य पदार्थ सरल, घुलनशील भोज्य पदार्थों में परिवर्तित होते हैं।
5. यह संचित ऊर्जा (स्थितिज) को काम में आने वाली ऊर्जा (गतिज ऊर्जा) में रूपान्तरित करती है।

श्वसन को प्रभावित करने वाले कारक
(Factors Affecting Respiration)

श्वसन की दर कई कारकों द्वारा प्रभावित होती है। सबसे अधिक श्वसन दर सक्रिय रूप से विभाजित होने वाली विभज्योतकी कोशिकाओं की होती है। श्वसन की दर को प्रभावित करने वाले कारकों को निम्न दो वर्गों में वर्गीकृत किया गया है–

1. बाह्य कारक (External factors)
2. आन्तरिक कारक (Internal factors)

1. बाह्य कारक – श्वसन को प्रभावित करने वाले प्रमुख बाह्य कारक निम्न हैं–

(i) **तापमान** (Temperature) – तापमान श्वसन की दर को प्रभावित करने वाला प्रमुख कारक है। 5°C से 25°C या 30°C तापमान तक श्वसन की दर लगातार बढ़ती है। 5°C से 30°C तक प्रत्येक 10°C तापक्रम बढ़ाने पर श्वसन की दर दुगुनी हो जाती है। अर्थात् 5°C से 30°C के मध्य श्वसन का तापक्रम गुणांक (Q_{10}) लगभग 2.0 होता है। श्वसन की दर अधिकतम 30°C तापक्रम पर होती है। 30°C से अधिक ताप बढ़ने पर एक बार श्वसन की दर बढ़ती है। परन्तु शीघ्र ही यह घटने लगती है। अधिक ताप पर श्वसन में भाग लेने वाले एन्जाइम विकृत हो जाते हैं। जिससे श्वसन की दर घट जाती है। इस कारण ही शीत–गृहों (Cold storage) में फल व सब्जियाँ बिना सड़े–गले अधिक समय तक रह पाती हैं।

(ii) **ऑक्सीजन** (Oxygen) – ऑक्सीजन वायवीय श्वसन के लिए आवश्यक कारक है क्योंकि वायवीय श्वसन में ऑक्सीजन अन्तिम इलेक्ट्रॉन ग्राही है। अतः श्वसन की दर को प्रभावित करने वाला महत्त्वपूर्ण कारक है। कम ऑक्सीजन सान्द्रता पर वायवीय व अवायवीय दोनों प्रकार के श्वसन होते हैं। जब ऑक्सीजन की सान्द्रता शून्य हो जाती है तब केवल अवायवीय श्वसन ही होता है। वायुमण्डल में O_2 की सान्द्रता 20.81 प्रतिशत तक होती है जो श्वसन की क्रिया के लिए आवश्यकता से कहीं अधिक है। अतः वातावरण में O_2 की सान्द्रता के एक सीमा तक घटने–बढ़ने से कोई प्रभाव नहीं पड़ता है, परन्तु 1–9 प्रतिशत तक या इससे कम सान्द्रता पर केवल अवायवीय श्वसन होता है जिससे केवल इथाईल एल्कोहल तथा कार्बनडाइऑक्साइड ही बनते हैं। ऐसी अवस्था में श्वसन गुणांक अनन्त होता है।

(iii) **जल** – अधिकांश पादप ऊतकों में 80–95 प्रतिशत तक जल होता है। जल कोशिकाओं में होने वाली जैव रसायनिक अभिक्रियाओं के लिए माध्यम की तरह कार्य करता है तथा यह इनमें भाग लेने वाले एन्जाइमों की क्रियाशीलता बढ़ाता है। जल की मात्रा कम होने के कारण ही सूखे बीजों व फलों की श्वसन की दर कम होती है। तथा इस कारण इन्हें अधिक समय तक रखा जा सकता है। जबकि जल की उपस्थिति में कार्बोहाइड्रेट्स घुलनशील शर्करा में परिवर्तित हो जाते हैं। जो श्वसन का मुख्य क्रियाधार है जिससे श्वसन दर बढ़ जाती है।

(iv) **प्रकाश** – श्वसन दिन व रात निरन्तर होता रहता है। प्रकाश परोक्ष रूप से श्वसन की दर को प्रभावित करता है जैसे– (क) प्रकाश के द्वारा तापमान बढ़ता है। जो श्वसन की दर को बढ़ाता है। (ख) प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा शर्करा का निर्माण होता है, जो श्वसन का महत्त्वपूर्ण क्रियाधार है तथा (ग) प्रकाश में रन्ध्र खुले रहते हैं अर्थात् गैसों का आदान–प्रदान होता है। अतः उपरोक्त तीन प्रकार से प्रकाश, श्वसन की दर को परोक्ष रूप से बढ़ाता है।

(v) **कार्बनडाइऑक्साइड** – कार्बनडाइऑक्साइड की सान्द्रता बढ़ने के साथ–साथ श्वसन की दर कम हो जाती है। अतः इसका प्रतिकूल प्रभाव बीजों के अंकुरण व पादपों की वृद्धि दर पर पड़ता है। हीथ (Heath) ने अपने प्रयोगों से यह सिद्ध किया कि CO_2 की अधिक सान्द्रता में रन्ध्र बन्द हो जाते हैं जिससे O_2 के अभाव में श्वसन दर कम हो जाती है।

2. आन्तरिक कारक – कोशिका जीवद्रव्य व उसमें पाये जाने वाले श्वसनीय क्रियाधार प्रमुख आन्तरिक कारक हैं। जो श्वसन की दर को प्रभावित करते हैं।

(i) **जीवद्रव्य** – विभज्योतकी कोशिकाओं में जीवद्रव्य अधिक पाया जाता है जिसके कारण इनकी श्वसन दर परिपक्व कोशिकाओं की तुलना में अधिक होती है।

(ii) **श्वसनीय क्रियाधार** – कोशिका में पायी जाने वाली विभिन्न प्रकार की शर्कराएं जैसे ग्लुकोज, फ्रक्टोज, माल्टोज इत्यादि कोशिकीय श्वसन के प्रमुख क्रियाधार हैं, जो ऑक्सीकरण होने पर कोशिकीय क्रियाओं के लिए आवश्यक ऊर्जा उत्पन्न करते हैं। अतः एक सीमा तक इनकी सान्द्रता बढ़ाने पर श्वसन की दर बढ़ती है।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. श्वसन एक उपपाचयी क्रिया है, जो सभी सजीवों में निरन्तर होती रहती है। श्वसन प्रक्रिया में जटिल कार्बनिक यौगिकों का सरल यौगिकों में विघटन होता है व ऊर्जा मुक्त होती है।
2. श्वसन मुख्य रूप से दो प्रकार का होता है– (i) ऑक्सीजन की उपस्थिति में होने वाला ऑक्सी श्वसन व (ii) ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में होने वाला आनॉक्सी श्वसन।
3. ऑक्सी व अनॉक्सी श्वसन की प्रारम्भिक प्रक्रिया कोशिका द्रव्य (Cytosol) में सम्पन्न होती है व समान होती है जिसे ग्लाइकोलाइसिस कहते हैं। पाइरूविक अम्ल, ग्लाइकोलासिस का अन्तिम उत्पाद है।
4. ग्लाइकोलाइसिस की सम्पूर्ण प्रक्रिया में $NADH+H^+$ व पाइरूविक अम्ल के दो–दो अणु तथा चार अणु ATP के बनते हैं।
5. अनॉक्सी श्वसन में ग्लुकोज अणु का अपूर्ण विघटन होता है, जिससे इस प्रक्रिया में कार्बनडाइऑक्साइड व एल्कोहल का निर्माण होता है व दो अणु ATP के बनते हैं।
6. ऑक्सीश्वसन की ग्लाइकोलाइसिस में बनने वाले पाइरूविक अम्ल का ऑक्सीकरण माइटोकोन्ड्रिया में सम्पन्न होता है।
7. पाइरूविक अम्ल के ऑक्सीकरण से सबसे पहले एसिटाइल कोएन्जाइम A, (CoA) का निर्माण होता है, जो क्रेब्स चक्र में प्रवेश कर CO_2 एवं जल में ऑक्सीकृत हो जाता है तथा GTP, $FADH_2$ एवं $NADH+H^+$ का निर्माण करता है।
8. $NADH+H^+$ और $FADH_2$ माइटोकोन्ड्रिया में सम्पन्न होने वाले इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र (ETS) में प्रवेश करते हैं, जहाँ यह फॉस्फोरिलीकरण की क्रिया द्वारा ATP का निर्माण करते हैं।
9. श्वसन के पश्चात् नेट उत्पाद 38 ATP एवं विशेष परिस्थिति में 36 ATP हो सकता है।
10. ऑक्सीकारी फॉस्फोरिलीकरण के आधुनिक सिद्धान्त का प्रतिपादन पीटर मिशेल द्वारा किया गया जिसे ऑक्सीकारी फॉस्फोरिलीकरण का रसायन परासरी सिद्धान्त के नाम से जाना जाता है।
11. ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में शर्कराओं के अपूर्ण विघटन से एल्कोहल व लेक्टिक अम्ल बनने की प्रक्रिया किण्वन कहलाती है।
12. श्वसन क्रिया में प्रयुक्त ऑक्सीजन व मुक्त होने वाली कार्बनडाइऑक्साइड के आयतन का अनुपात श्वसन गुणांक कहलाता है।
13. श्वसन गुणांक श्वसन की क्रिया में प्रयुक्त होने वाले क्रियाधारों की प्रकृति पर निर्भर करता है। कार्बोहाइड्रेट्स का श्वसन गुणांक–1, वसा व प्रोटीन्स का एक से कम, कार्बनिक अम्लों का 1 से अधिक व अवायवीय श्वसन का अनन्त होता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. इसमें से कौनसी क्रिया ऑक्सी श्वसन में नहीं होती है–
   (अ) CO_2 का निर्माण
   (ब) 38 ATP का निर्माण
   (स) पदार्थों का पूर्ण ऑक्सीकरण
   (द) 2 ATP का निर्माण
2. निम्न में से श्वसन को प्रभावित करने वाले कारक है–
   (अ) जल (ब) CO_2
   (स) जीवद्रव्य (द) उपरोक्त सभी
3. अवायवीय श्वसन का श्वसन गुणांक होता है–
   (अ) अनन्त (ब) 0.92
   (स) 1.25 (द) 1
4. ग्लाइकोलाइसिस की सम्पूर्ण प्रक्रिया में कितने अणु ATP के बनते हैं–
   (अ) 2 अणु (ब) 4 अणु
   (स) 38 अणु (द) 12 अणु
5. निम्न में से श्वसन गुणांक है–
   (अ) O_2 / CO_2 का भार (ब) CO_2 / O_2 का भार
   (स) CO_2 / O_2 का आयतन (द) O_2 / CO_2 का आयतन
6. क्रेब्स चक्र सम्पन्न होता है–
   (अ) केन्द्रक में (ब) माइटोकोन्ड्रिया में
   (स) कोशिका द्रव्य में (द) हरितलवक में

7. पाइरूवेट से एसिटाइल CoA बनने की प्रक्रिया कहलाती है–
   (अ) अपचयन
   (ब) ऑक्सीकरण
   (स) जल–योजन
   (द) ऑक्सीकीय डीकार्बोक्सिलीकरण
8. ऑक्सीकीय फॉस्फोरिलीकरण के केमीऑस्मोटिक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया–
   (अ) क्रेब्स ने (ब) पीटर मिटचेल ने
   (स) वारबर्ग–डीकन्स ने (द) गिब्स ने

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

1. श्वसन को परिभाषित कीजिये।
2. ऑक्सी श्वसन एवं अनॉक्सी श्वसन में अन्तर बताइये।
3. ग्लाइकोलाइसिस को परिभाषित कीजिये।
4. क्रेब्स चक्र के महत्व लिखिये।
5. ऑक्सीय फॉस्फोरिलीकरण को समझाइये।
6. ATP, NADH तथा FAD को समझाइये।
7. किण्वन (Fermentation) की क्रिया को समझाइये।
8. श्वसन गुणांक को समझाइये।
9. श्वसन के महत्व बताइये।
10. पेन्टोज फॉस्फेट पथ को परिभाषित कीजिये।
11. सार्वत्रिक ऊर्जा मुद्रा (Universal Energy Currency) को परिभाषित कीजिये।
12. ऑक्सेलो–सक्सिनेट का कार्य बताइये।
13. ऑक्सीकीय डिकार्बोक्सिलीकरण की क्रिया को समझाइये।
14. ऑक्सीकीय डिकार्बोक्सिलीकरण की क्रिया में आवश्यक सहकारकों के नाम बताइये।
15. प्रोटोप्लाज्मिक श्वसन को परिभाषित कीजिये।

लघुत्तरात्मक प्रश्न

1. क्रेब्स चक्र/सिट्रिक एसिड चक्र का चित्र सहित वर्णन कीजिये।
2. इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र का वर्णन कीजिये।
3. ऑक्सीकीय फॉस्फोरिलीकरण का केमीऑस्मेटिक सिद्धांत समझाइये।
4. किण्वन को परिभाषित कर इसके प्रकारों का वर्णन कीजिये।
5. श्वसन को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिये।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. श्वसन की क्रिया विधि का सचित्र वर्णन कीजिये।
2. ग्लाइकोलाइसिस में सम्पन्न होने वाली जैव रासायनिक अभिक्रियाओं को वर्णन कीजिये।
3. शर्करा के विघटन के अन्य पथों का वर्णन कीजिये।
4. श्वसन गुणांक को समझाइये तथा श्वसन में प्रयुक्त होने वाले भिन्न–भिन्न क्रियाधारों के श्वसन गुणांकों को समझाइये।

उत्तरमाला: 1 (द) 2 (द) 3 (अ) 4 (ब) 5 (स) 6 (ब) 7 (द) 8 (ब)

अध्याय – 17

पादप वृद्धि एवं वृद्धि नियन्त्रक
(Plant Growth and Growth Regulators)

फिलिप्स (1971) ने ''वृद्धि हार्मोन की परिभाषा उन पदार्थों के रूप में की, जो विशेष कोशिकाओं में संश्लेषित होते हैं और दूसरी कोशिकाओं में स्थानांतरित हो जाते हैं, जहां अत्यधिक कम मात्रा में होते हुए भी वे विकास प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं (substances which are synthetized in particular cells and which are transferred to other cells where in extremely small quantities influence developmental process)।'' सामान्य हार्मोनों में ऑक्सिन, जिब्बरेलिन, साइटोकाइनिन, एथिलीन, डॉर्मिन, फ्लोरिजेन आदि आते हैं।

किन्तु अब पादप वृद्धि को प्रभावित करने वाले पदार्थों के विभिन्न वर्गों का पता लग चुका है, जिन्हें वृद्धिकारी और वृद्धि रोधी पदार्थों में बाँटा जा सकता है, या प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले और संश्लेषित वृद्धि पदार्थों में विभाजित किया जा सकता है। फिर भी, अब वृद्धि नियामक पदार्थ (growth regulators) शब्द का प्रयोग पसंद किया जाता है जिसमें प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले और संश्लेषित वृद्धि पदार्थों को सम्मिलित किया गया है। वृद्धि नियामक पदार्थों को निम्नलिखित वर्गों में बाँटा जा सकता है :

वृद्धि प्रवर्धक

1. ऑक्सिन, जैसे इंडोल एसेटिक अम्ल (IAA)
2. जिबेरेलिन, जैसे जिबरेलिक अम्ल (GA)
3. साइटोकाइनिन, जैसे काइनेटिन, जीएटिन

वृद्धि रोधक

1. इथिलीन 2. ऐब्सिसिक अम्ल (ABA)

अन्य 1. पुष्प संबंधी हार्मोन, जैसे फ्लोरिजेन, ऐंथेसिन, वर्नेलिन 2. अन्य पदार्थ, जैसे साइक्लिटॉल, विटामिन, फाइटोक्रोम, क्षतिज पदार्थ (traumatic substances), कॉमरिन, CCC, AMO 1618, फॉस्फॉन D, मॉर्फेक्टिन, मैल्फॉर्मिन, मैलिक हाइड्रैजाइड (MH) आदि।

पौधों में वृद्धि का नियमन कई वृद्धि पदार्थों की अंतर्क्रिया द्वारा होता है। इसे कायिक वृद्धि (vegetative growth) के उदाहरण से भली प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है।

ऑक्सिन (Auxin)

वृद्धि पदार्थों के अस्तित्व का होना चार्ल्स डार्विन ने (1880) अपनी पुस्तक 'The Power of Movements in Plants' में किया था। कैनेरी घास (Phalaris canariensis) पर कार्य करते हुए उन्होंने दिखलाया कि नवोद्भिद की शीर्ष एकपार्श्विक (unilateral) प्रकाश के प्रति संवेदी होती हैं और उनमें धनात्मक प्रकाशानुवर्तन (positive phototropism) दिखायी देता है। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि शीर्ष एकपार्श्वीय प्रकाश उत्तेजना का अनुभव करती है, किन्तु प्रांकुरचोल (coleoptile) के प्रकाशित भाग की अपेक्षा छायादार भाग पर अधिक तेज वृद्धि के फलस्वरूप वक्रता उत्पन्न होती है। उन्होंने यह भी देखा कि जब कोलिओप्टाइल का शीर्ष विच्छेदन किया गया तो वक्रता प्रतिक्रिया नहीं हुई। डार्विन ने अपने ही शब्दों में कहा कि ''नवोद्भिद् (seedlings) पार्श्वीय प्रकाश के सामने मुक्त रूप से जब रहते हैं तब ऊपरी भाग से निचले भाग में कोई प्रभाव प्रक्षेपित होता है जिससे वह झुक जाता है।'' इस प्रकार उन्होंने एक वृद्धि सहसंबंध कारक की धारणा धारण की।

इसी प्रकार का निरीक्षण कैनेरी घास (oat) के कोलिओप्टाइल पर कार्य करते समय बॉयसेन–जेंसेन (1913) ने किया। उन्होंने कहा कि ''उत्तेजन का प्रक्षेपण (transmission of irritation) कोलिओप्टाइल शीर्ष में सांद्रता परिवर्तनों द्वारा उत्पन्न भौतिक (material) प्रकृति का होता है।'' पाल (1919) ने अपने अध्ययन को यह कह कर आगे बढ़ाया (endorsed) कि ''प्ररोह शीर्ष वृद्धि नियमन केन्द्र का स्थान (seat) होता है। इसमें एक पदार्थ (या मिश्रण) बनता है और अंदर से ही स्त्रवित होता है और यह पदार्थ सभी ओर समान रूप से वितरित रहता है तथा लम्बे समय में नीचे

की ओर आता है।'' उन्होंने आगे देखा कि यदि प्रांकुर चोल की अप्रदीप्त सतह (Dark side) पर आधे भाग में एक अनुप्रस्थ चीरा लगाकर उसमें माइका प्लेट लगा दी जाती है तब प्रांकुरचोल में वक्रता नहीं होती है, किन्तु यदि माइका प्लेट प्रकाशित सतह (Illuminated side) पर लगाई जाए तब प्रांकुर चोल प्रकाश की ओर मुड़ जाता है।

ऑक्सिन्स के बारे में अधिकांश ज्ञान जई (Avena sativa) के प्रांकुरचोल (Coleoptile) से प्राप्त हुआ है। यदि जई कोलिओप्टाइल की वर्धनशील शीर्ष हटा दिया जाये तो कोलिओप्टाइल के शेष भाग में वृद्धि में स्पष्ट कमी दिखेगी जो अंत में रूक जायेगी। इसका यह अर्थ होता है कि वृद्धि ऊपरी क्षेत्र में ही सीमित रहती या उस पर निर्भर करती है। यदि हटाये गए शीर्ष को एक अगार ब्लॉक पर कई घण्टों तक रखकर फिर हटा लिया जाए और अगार ब्लॉक को कटे तने में स्थानांतरित कर दिया जाये तो देखा जाता है कि ब्लॉक आंशिक रूप से शीर्ष का स्थानापन्न बन जाता है और वृद्धि होने लगती है (चित्र 17.1 A, B, C)। यह प्रयोग बतलाता है कि शीर्ष में संश्लेषित पदार्थ नीचे आ जाता है (अगार ब्लॉक में) और शीर्ष की लंबवृद्धि के लिए उत्तरदायी होता है। कोगल (Kogl) ने इसे ऑक्सिन नाम दिया। यह एक यूनानी शब्द (Auxein) से लिया गया है, जिसका अर्थ होता है : वृद्धि करना।

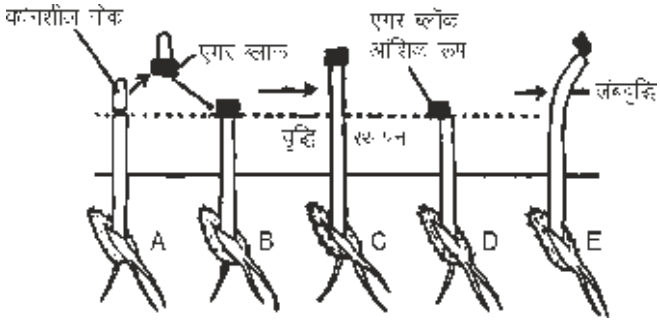

चित्र 17.1 : जई कोलिओप्टाइल (oat coleoptile) **प्रयोग का प्रदर्शन।** A - **तना नोंक हटाकर उसे एगर ब्लॉक** (agar block) **(चित्र में काला टुकड़ा) पर रखा गया;** B, C - **एगर ब्लॉक को कटे तने की नोंक पर रखा गया और वृद्धि चालू हो गई;** D, E - **एविना वक्रता परीक्षण** (Avena curvature test) D - **एगर ब्लॉक उत्केन्द्री रूप से** (eccentrically) **रखा गया और** E - **वक्रता उत्पन्न हुई।**

वेन्ट (1928) ने एवेना–वक्रता परीक्षण (Avena curvature test) किया। उन्होंने अगार ब्लॉक पर कई ताज़ी कटी कोलिओप्टाइल शीर्ष रखी फिर कई घंटों बाद उन्हें कई टुकड़ों में काट दिया। उन्होंने अगार ब्लॉक टुकड़ों को कोलिओप्टाइल कटे भाग पर उत्केंद्री रूप से (eccentrically) दो घण्टों तक अंधेरे में रखा। वृद्धि वक्रता हुई और कोलिओप्टाइल अगार ब्लॉक टुकड़ों के विपरीत भाग की ओर एक तरफ मुड़ गए (चित्र 17.1 D, E)।

इस प्रकार की बात अगार ब्लॉक से कोलिओप्टाइल में ऑक्सिन के विसरण के कारण हुई, जिससे उस ओर लंबवृद्धि और वृद्धि होने के फलस्वरूप कोलिओप्टाइल शीर्ष वक्रित हो गया। वेन्ट का ऑक्सिन IAA था।

वेन्ट (1928) ने इसी प्रकार एक दूसरा प्रयोग किया, जिसमें कोलिओप्टाइल के प्रकाशित और अप्रकाशित भागों में ऑक्सिन का मात्रात्मक वितरण निर्धारित किया गया। कोलिओप्टाइल के प्रकाशित भाग में केवल 27 प्रतिशत ऑक्सिन रहा जबकि अप्रकाशित भाग में 57 प्रतिशत ऑक्सिन था। नियंत्रित प्रयोग में, यदि हर क्षेत्र में एक जैसा प्रकाश उपलब्ध हो तो ऑक्सिन का एक समान वितरण दिखलायी देगा। ऐसा प्रकाशित भाग से अप्रकाशित भाग की ओर ऑक्सिन के स्थानांतरण के कारण होता है (चित्र 17.2)।

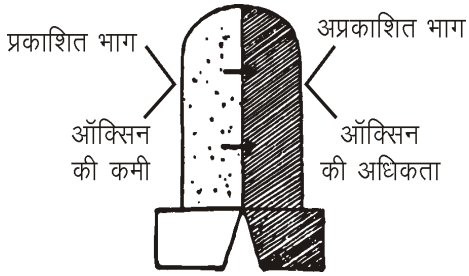

चित्र 17.2 : वेन्ट के प्रयोग में प्रकाश की प्रतिक्रिया में ऑक्सिन वितरण को दिखलाया गया है।

थिमेन एवं स्कूग (1933) ने देखा कि ऑक्सिन पार्श्वीय कलिका निर्माण को रोकता है। उन्होंने पाया कि यदि शीर्ष कलिका हटा दी जाये तो पार्श्वीय कलियां प्रस्फुटित हो जाती है। इस घटना को शीर्ष कलिका प्रभुता (apical bud dominance) कहते हैं।

ऑक्सिन्स के अभिलक्षण (Characteristics of Auxins)

ऑक्सिन्स के नीचे लिखे अभिलक्षण होते हैं :

1. ध्रुवीय स्थानांतरण (polar translocation) (शीर्ष से नीचे की ओर गमन)
2. शीर्ष कलिका प्रभुता (apical bud dominance)
3. मूलीय और प्ररोह वृद्धि के व्यवहार में भिन्नता
4. मूल आरंभन (root initiation)
5. विलगन (abscission) में देरी
6. जाइलम तत्वों का विभेदीकरण (differentiation of xylem elements)

ऑक्सिन्स की रासायनिक प्रकृति (Chemical Nature of Auxins)

कोगल और हागेन–स्मिथ (1931) ने 40 मि.ग्रा. *ऑक्सिन* a लगभग 150 लीटर मानव मूत्र से अलग किया। रासायनिक दृष्टि से इसे ऑक्सेनट्रायोलिक अम्ल ($C_{18}H_{32}O_5$) माना गया। सन् 1934 में कोगल, अर्क्सलेबैन और हागेन–स्मिथ ने मक्का जर्म तेल से *ऑक्सिन* b (ऑक्सेनोनिक अम्ल) ($C_{18}H_{30}O_4$) अलग किया। बाद में उन्होंने मानव मूत्र से दूसरा ऑक्सिन अलग किया और उसे हेटेरोऑक्सिन नाम दिया, जिसे बाद में इंडोल–3– एसेटिक अम्ल (IAA, C_{10}, H_9 O_2 N) कहा गया। ऑक्सिन a और b पौधों में सार्वत्रिक रूप से प्राप्त नहीं हुए किन्तु IAA सभी उच्चतर पौधों और फफूंदी में प्राकृतिक रूप से प्राप्त मुख्य ऑक्सिन है। यह मनुष्यों के मूत्र में भी, विशेषकर उन लोगों में मिलता है जो नियासिन या निकोटिनिक अम्ल की कमी के रोग से ग्रस्त होते हैं (अर्थात् पेलाग्रा रोगी होते हैं)। इंडोल–3–एसेटैल्डिहाइड, इंडोल–3–एसीटोनाइट्राइल, इंडोल–3–एथेनॉल, 4–क्लोरो IAA भी पौधों में पाए जाते हैं।

प्राकृतिक रूप से प्राप्त ऑक्सिन्स के अलावा, समान गुणों वाले कुछ दूसरे पदार्थ हैं : इंडोल ब्यूटाईरिक अम्ल (IBA), α और β-नैफ्थेलीन एसेटिक अम्ल (NAA), 2, 4-D, 2, 4, 5-ट्राइक्लोरोफेनॉक्सी एसेटिक अम्ल (2, 4, 5 -T), इंडोल प्रॉपिओनिक अम्ल (IPA) आदि।

ऑक्सिन्स का जैवसंश्लेषण (Biosynthesis of Auxins)

ऑक्सिन संश्लेषण के अब तक ज्ञात स्थल हैं– प्ररोह शीर्ष क्षेत्र (विशेषकर शीर्ष कलिका की युवा फैलती पत्तियाँ), घास की शीर्ष, कोलिओप्टाइल तथा विकासशील भ्रूण, विकासशील फल, वर्धनशील ऊतक आदि। ऑक्सिन का संश्लेषण अंधकार की अपेक्षा प्रकाश की उपस्थिति में हरे पत्तों में तेजी से होता है। ट्रिप्टोफान व ट्रिप्टेमीन ऑक्सिन के पूर्ववर्ती पदार्थ हैं।

ऑक्सिन्स की भूमिका (Role of Auxins)

ऑक्सिन्स की कुछ महत्वपूर्ण भूमिकाएं नीचे दी जा रही हैं :

1. शीर्ष प्रभुता (Apical Dominance) – थिमैन एवं स्कूग (1953) ने पाया कि शीर्ष कलिका (apical bud) हटा देने पर पार्श्वीय कलिका (lateral buds) प्रस्फुटित होने लगती है और बड़ी संख्या में पार्श्वीय कलिकाएं बन जाती हैं। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि ऑक्सिन पार्श्वीय कलिका निर्माण रोकता है, और चूंकि ऑक्सिन्स का संश्लेषण शीर्ष में होता है, इसलिए उन्होंने इस घटना को शीर्ष कलिका प्रभुता (apical bud dominance) की संज्ञा दी। यह तथ्य लगभग सभी उदाहरणों में प्रमाणित हुआ।

उन्होंने आगे देखा कि आलू कंदों पर एथिलिन क्लोरोहाइड्रिन (यह पदार्थ ऑक्सिन्स को नष्ट कर देता है) के प्रयोग से शीर्ष और पार्श्वीय दोनों कलियां खिल उठी। सामान्य दशा में केवल शीर्ष कलियां खिलती हैं।

शीर्ष कलिका प्रभुता की घटना को अब एक परिवर्तित संस्करण (modified version) द्वारा समझाया गया है। पार्श्वीय कलिकाएं तने के मुख्य संवहन ऊतकों के साथ संबंध नहीं जोड़ती, इसलिए इनमें उचित उपापचयकों, कार्बनिक विलेयों (शूगर, एमिनो अम्ल आदि) तथा वृद्धि पदार्थों की आपूर्ति नहीं हो पाती। साथ ही प्ररोह शीर्ष में विभिन्न पदार्थों की तीव्र मांग के कारण भी वृद्धि पदार्थों और उपापचयकों की कमी पड़ सकती है।

IAA विभज्योतक कोशिकाओं में उपापचयिक क्रियाएं बढ़ाता है, जिसके साथ संवहन ऊतकों में घूमते कार्बनिक विलेयों की तीव्र मांग रहती है। शीर्ष विभज्योतक (apical meristem) पर तीव्र उपापचयिक पदार्थों कमी का यह संयोग उच्च IAA सांद्रता द्वारा बढ़ जाता है और मुख्य परिवहन धारा से अलग पड़े पार्श्वीय कलिका के विकास को प्रभावी रूप से रोक देता है।

2. कोशिका विभाजन और कोशिका दीर्घीकरण (Cell division and cell enlargement) – ऑक्सिन कोशिका विभाजन, कोशिका वृद्धि और शीर्ष क्षेत्र में कोशिका दीर्घीकरण को उत्तेजित करता है। ऑक्सिन का प्राथमिक शरीर क्रियात्मक प्रभाव कोशिकाओं की लंबाई बढ़ाना होता है।

3. प्ररोह एवं मूलीय वृद्धि (Shoot and Root Growth)– ऑक्सिन प्ररोह को उच्च सांद्रता पर और जड़ों को अति निम्न सांद्रता पर बढ़ाता है।

4. जाइलम विभेदीकरण (Xylem Differentiation) – ऑक्सिन द्वारा जाइलम तत्व का विभेदीकरण बढ़ाना अब सुस्थापित घटना हो चुकी है और इसे ऑक्सिन बायोएसे (bioassay) की माप रूप में लिया जाता है (मटर वक्रता परीक्षण देखें)।(इसी गुण के कारण ऑक्सिन्स का कलिका ग्राफ्टिंग से कैलस बनाने में प्रायः प्रयोग होता है।

कैलस अविभाजित मृदुतकी कोशिकाओं की एक संहति होता है और जब इसको ऑक्सिन से उपचारित करते हैं तो जाइलम तत्व कोशिका ऊतक में विभाजित हो जाते हैं। इस तरह ऑक्सिन कैलस के संवहन ऊतक और कलिका के संवहन ऊतक के बीच संपर्क स्थापित करने में सहायता करता है और कैलस में कलिका के सही ढंग से उगने को संभव बनाता है। ऑक्सिन और शूगर मिला देने पर कैलस की निरंतर वृद्धि प्राप्त की जा सकती है और कैलस से नए प्ररोह और नए पौधे तक उत्पन्न किये जा सकते हैं।

5. न्यूक्लीइक अम्ल की क्रियाएं (Nucleic acid Activities) – ऑक्सिन वृद्धि में क्रियाशीलता बढ़ाता है। सेटरफील्ड (1963) की रिपोर्ट है कि IAA सम्पूर्ण RNA विशेषकर mRNA के संश्लेषण और विशिष्ट एंजाइमों के संश्लेषण को बढ़ाता है।

6. बहुविधि क्रियाएं (Manifold Activities) – ऑक्सिन पादप जीवन को कई प्रकार से प्रभावित करता है। पहले वर्णित विविध प्रक्रियाओं के अलावा ऑक्सिन की बीज अंकुरण वृद्धि, जड़ निकलने, फूल लगने (प्रजननात्मक क्रियाएं), विलगन (abscission), अनिषेकफलन (parthenocarpy), ऊतक संवर्धन (tissue culture) आदि में भी विशिष्ट भूमिका है।

ऑक्सिन्स का व्यवहारिक उपयोग
(Practical Application of Auxins)

ऑक्सिन्स का प्रयोग कई तरह से हुआ है, जिनमें से कुछ नीचे दिये जा रहे हैं :

1. अंकुरण (Germination) – कोलोडनी (1930) ने पहली बार प्रस्ताव किया कि कृषि में हार्मोनों का प्रयोग हो सकता है। उनका कहना था कि उन्हें गेहूँ के दानों के हार्मोनीकरण से 55 प्रतिशत अधिक गेहूँ की उपज मिली। बाद में कई वैज्ञानिकों ने ऐसी ही सूचनाएं दी। आजकल दानों को अंकुरण के लिए भिगोने के लिए IAA, IBA, NPA, 2, 4-D का विस्तृत उपयोग होता है।

2. जड़ निकालना (Rooting) – वेंट (1934) की राय थी कि जड़ निर्माता पदार्थ IAA जैसा होता है। तभी से इस पर अब तक काफी काम किया जा चुका है। काष्ठी पौधों (woody plants) के कर्तनों (cuttings) में जड़ निकालने के लिए NAA तथा IBA का प्रयोग किया जाता है।

भारत में जड़ निकलने में कार्बनिक पदार्थों के महत्व का लम्बे समय से पता था क्योंकि गुलाब के कलमों पर जल्दी और जड़ जमाव के लिए गोबर के मिश्रणों का प्रयोग किया जाता रहा है। इस प्रकार काफी समय से इस बात का ज्ञान है कि जड़ उत्पन्न करने में ऑक्सिन्स की भूमिका होती है, जो केवल संख्या ही नहीं अपितु संरचना को भी प्रभावित करते हैं।

3. पुष्पन या फूल लगना (Flowering) – हिचकॉक और ज़िमरमैन ने पहली बार दिखलाया कि *निकोटियाना टैबेकम* (Nicotiana tabacum) में पुष्पन को बढ़ाने के लिए ऑक्सिन्स की सूक्ष्म मात्रा का उपयोग किया जा सकता है। दिवा तटस्थ (day neutral) पौधों में ऑक्सिन्स की पुष्पजन भूमिका पायी गई है। और, इस तथ्य की रिपोर्ट है कि IAA मादा फूलों के निर्माण को बढ़ाता है।

4. अनिषेक फलन (Parthenocarpy) – *हिबिस्कस एस्कुलेंटस* (Hibiscus esculentus) और *सोलेनम मेलांजेना* (Solanum melongena) में NAA तथा IBA उपचार द्वारा अनिषेकफलन (parthenocarpy) पैदा किया गया था।

5. फल जमना (Fruit setting) – कुकुर्बिटेसी, सोलेनेसी, कैरिकेसी, पैपावेरेसी, कैक्टेसी कुलों के पौधों में फल जमने में ऑक्सिन्स के प्रभाव का अध्ययन भारत में किया गया है।

6. फलों का परिपक्वन पूर्व झड़न रोकना (Preventing premature drop of fruits) – 2,4-D, IAA, IBA, 2,4,5-T आदि के प्रयोग द्वारा सेब, नाशपती, साइट्रस आदि पर सफल अध्ययन किये गए हैं। 2,4-D को पत्तागोभी और फूलगोभी के पत्तों का झड़न रोकने में सफल पाया गया है।

7. ऊतक और अंग संवर्धन (Tissue and organ culture) – ऑक्सिन, ऊतक और अंग संवर्धन में सर्वथा सहायक होता है और कैलस ऊतकों में जड़ लगने तथा विभाजन को प्रेरित करने के लिए विभिन्न संवर्धन माध्यमों में इनका उपयोग नियमित रूप से होता है।

8. खरपतवार नियंत्रण (Weed control) – ऑक्सिन चयनात्मक खरपतवारनाशी होते हैं और फसली खेतों, रेलमार्गों के अगल–बगल, लॉन और जंगलों में खरपतवार नष्ट करने के लिए इनका व्यापक प्रयोग होता है। प्रकृति में ऑक्सिन के सामान्य खरपतवार नाशियों में 2,4-D (2,4- डाइक्लोरो–फेनॉक्सी एसेटिक अम्ल), 2,4,5-T (2,4,5-ट्राइक्लोरोफेनॉक्सी एसेटिक अम्ल), MCPA (2-मेथिल–4–क्लोरोफेनॉक्सीएसेटिक अम्ल), डाइकाम्बा, NAA, पिक्लौरम (टॉरडॉन) आदि सम्मिलित हैं।

ये यौगिक DNA अनुलेखन और RNA स्थानांतरण को बदल देते हैं जिसमें सामान्य वृद्धि के लिए उचित एंजाइम पैदा नहीं होते।

2,4-D एक चयनात्मक खरपतवार नाशी है। यह चौड़ी पत्ती या द्विबीजपत्री पौधों के लिए अतिविषाक्त होता है, जबकि संकरी पत्तियों वाले या एकबीजपत्री पौधों के लिए अपेक्षाकृत कम विषाक्त होता है। यह कार्बोहाईड्रेट उपापचय इस सीमा तक बढ़ा देता है कि डाइकॉट पौधे स्वयं ही जल कर मर जाते हैं। इसको खरपतवार रूप में न केवल इसी कारण से प्रयुक्त किया जाता है, बल्कि इस कारण से भी किया जाता है कि :

(1) मिट्टी से इसकी विषाक्तता जल्द ही समाप्त हो जाती है,

(2) अतिनिम्न सांद्रता पर यह किफायती और प्रभावी होता है, और

(3) खरपतवार नाशीरूप में प्रयुक्त सांद्रताएं जानवरों और मनुष्यों के लिए विषाक्त नहीं होती।

जिब्बरेलिन (Gibberellin)

जिब्बरेलिन पौधों में प्राप्त महत्वपूर्ण वृद्धि हार्मोनों में दूसरे स्थान पर हैं। इसके बारे में पहली जानकारी एक जापानी किसान कोनिशी (1898) को हुई, किन्तु कुरोसावा ने फारमोसा में कार्य

करते हुए 1926 में जिब्बरेलिन (GA) की खोज की। इसको पहले ऐस्कोबीजाणु वाले फंगस, *जिबरेला फूजीकुरोई* (Gibberella fujikuroi) (*फ्यूजेरिअम मोनिलिफॉर्मी* (Fusarium moniliforme) जो इसका अलैंगिक रूप है से निस्सारित (extracted) किया गया। यह फंगस चावल में मूर्ख नवोद्भिद (foolish seedling of rice) रोग उत्पन्न करता है; इसे आमतौर पर चावल का बकेनी रोग (bakanae disease) भी कहते हैं। संक्रमित पौधे असामान्य रूप से लंबे बीजरहित और फीके रंग के होते थे। ये लक्षण फंगस द्वारा स्त्रावित एक पदार्थ के कारण पैदा हुए थे। याबूटा, हायाशी और काहनबे ने पहली बार फंगस से सक्रिय मुख्य विष को पृथक् किया, जिसको उन लोगों ने जिब्बरेलिन नाम दिया। सन् 1938 में याबूटा और सुमुकी ने कवक से जिब्बरेलिन A और B को क्रिस्टल रूप में अलग किया। बाद में इसे उच्च पौधों से भी अलग किया गया।

जिब्बरेलिनों के अभिलक्षण (Characteristics of Gibberellins)

1. आनुवांशिक और शरीरक्रियात्मक बौनापन का निस्तारण (Treating hereditary and physiological dwarfism),
2. सुप्तावस्था (dormancy) को तोड़ना,
3. दीर्घ दिवस पादपों में पुष्पन प्रेरित करना (Flowering in long day plants),
4. एमाइलेज क्रिया बढ़ाना और
5. शीतलन (chilling) प्रभाव को विस्थापित करना।

जिब्बरेलिनों की रासायनिक संरचना (Chemistry of Gibberellins)

जिब्बरेलिन चक्रीय डाइटर्पीन होता है व रासायनिक रूप से तनु अम्ल है जैसे $C_{19}H_{24}O_6$ (GA_1), $C_{19}H_{26}O_6$ (GA_2), $C_{19}A_{22}O_6$ (GA_3 या जिबरेलिक अम्ल), $C_{19}H_{24}O_5$ (GA_4) आदि। अब तक 100 से अधिक प्रकार के जिब्बरेलिनों का पता लग चुका है और उन्हें GA_1, GA_2, GA_3 से GA_{70} तक नाम दिया गया है। इनमें GA_3 सबसे पहले खोजे जाने वाले तथा सामान्य रूप से पाये जाने वाले जिब्बरेलिनों में से एक है। जिब्बरेलिनों की सबसे बड़ी संख्या (25) फंगस, Gibberella fujikuroi, में बतलाई गई है।

जिब्बरेलिनों का जैवसंश्लेषण (Biosynthesis of Gibberellins)

जिब्बरेलिनों के संश्लेषण के बारे में बहुत कम सफल अनुसंधान किए गए हैं। उनके जैवसंश्लेषण का प्रथम चरण कैरोटिनॉयडों और टर्पिनॉयडों के लगभग समान होता है जिसमें एसेटिल CoA से *ट्रांस* – जिरैनिलजिरैनिल पाइरोफॉस्फेट का निर्माण होता है। द्वितीय चरण में *ट्रांस* – जिरैनिलजिरेनिल पाइरोफॉस्फेट से जिब्बरेलिन का संश्लेषण होता है।

GA के संश्लेषण और स्थानांतरण का स्थान (Site of GA Synthesis and Translocation)

जिब्बरेलिन सभी दिशाओं और फ्लोएम तथा जाइलम सहित सभी ऊतकों में गति करता है। इनका संश्लेषण युवा पत्तों (मुख्य स्थान), मूल शीर्ष और अपरिपक्व बीजों (भ्रूण) में होता है। इनका वितरण अधुवीय व अग्राभिसारी होता है।

अंतर्जात जिब्बरेलिनों की भूमिका (Role of endogenous Gibberellins)

1. शीर्ष कलिका प्रसुप्ति खण्डन (Breaking apical dormancy) – कुछ वातावरणीय दशाओं में जब शीर्ष कलिका प्रसुप्त (dormant) हो जाती है तब जिब्बरेलिन इस प्रसुप्ति को हटा सकते हैं। इसके साथ ही, शीतोपचार (cold treatment) जो प्राकृतिक कलिका प्रसुप्ति को भंग करता है, जिब्बरेलिनों के अंतर्जात स्तर को बढ़ा देता है। इस क्षेत्र की क्रिया का नियमन जिब्बरेलिन द्वारा अंतर्जात वृद्धि रोधकों (प्रसुप्तकों) के प्रभाव के विपरीत क्रिया द्वारा होता है।

2. उपशीर्ष विभज्योतक में भूमिका (Role in sub-apical meristem) – उपशीर्ष विभज्योतक में जिब्बरेलिन की भूमिका प्रत्यक्ष होती है। यह इस क्षेत्र में सूत्रीविभाजन (mitotic processes) का नियमन करता है।

3. फलवृद्धि (Fruit-growth) – जिब्बरेलिन का प्रयोग करके टमाटर के अनिषेचित फूलों और सेब तथा आड़ू की कुछ किस्मों से सामान्य दिखने वाले फल पैदा किए।

4. पुष्पन (Flowering) – जिब्बरेलिन की दीर्घ दिवस पादपों में पुष्प आरंभन में एक महत्वपूर्ण भूमिका है।

5. बीज अंकुरण (Seed germination) – बीज अंकुरण के समय α–एमाइलेज और एक बीज पत्री तथा कतिपय द्विबीज पत्री में दूसरे जलापघटक एंजाइमों के संश्लेषण की प्रेरणा में GA की भूमिका के बारे में अनेक सूचनाएं प्राप्त हैं। GA_3 बीज अंकुरण की आरंभिक अवस्थाओं के दौरान ग्लूकोनिओजेनिक एंजाइमों की क्रिया को मुख्य रूप से प्रेरित करता प्रतीत होता है। (ग्लूकोनिओजेनेसिस का अर्थ कार्बोहाइड्रेटों की अपेक्षा दूसरे पदार्थों से शूगर का संश्लेषण होना होता है)। वसा सम्पन्न बीजों में सुक्रोज का स्त्रोत लिपिड होता है।

6. बीज भण्डारण कोशिकाओं में खाद्य की गतिशीलता (Mobilisation of foods in seed storage cells) – α–amylase एन्जाइम की सक्रियता में वृद्धि कर यह कार्य सम्पन्न किया जाता है।

जिब्बरेलिनों (GA) की क्रिया और व्यावहारिक प्रयोग
(Action and Practical Application of Gibberellins)

GA का सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रभाव तना वृद्धि होता है, अर्थात् GA अंतपर्वीय दीर्घीकरण (internodal elongation) या उपशीर्ष दीर्घीकरण (sub-apical elongation) लाता है। इसकी पुष्टि मटर, सेम, टमाटर, मीठी मक्का, समर स्क्वैश, खीरा, लेटूस, पत्तागोभी आदि कई पौधों में हुई है। पत्तागोभी जैसे गुलाबवत (Rosette) पादपों में वृद्धि के जनन काल में प्रवेश से पूर्व अचानक लम्बाई में प्राकृतिक वृद्धि होती है, जिसे बॉल्टिंग (Bolting) कहते हैं।

साइटोकाइनिन (CYTOKININ)

उच्चतर पौधों के जीवन में साइटोकाइनिन मुख्य भूमिका निर्वाह करती हैं। स्कूग (1955) ने दिखलाया है कि जब *निकोटिआना टैबेकम* (Nicotiana tabacum) के पिथ ऊतकों को संवहन और वल्कुटी तत्वों (cortical elements) से अलग किया गया तो वे ऑक्सिन युक्त माध्यम की तरह बढ़े और उनमें बिना कोशिका विभाजन के अत्याधिक वर्धन दिखलायी दिया। जब उनके सम्पर्क में संवहन ऊतक रखे गये तब पिथ ऊतकों में कोशिका विभाजन प्रारम्भ हो गया। इस निरीक्षण ने साइटोकाइनिन्स की खोज में महत्वपूर्ण कार्य किया। मिलर, स्कूग और सैल्जा तथा स्ट्रांग (1955) ने हेरिंग–शुक्राणु-DNA से एक पदार्थ को पृथक करके उसे काइनेटिन (kinetin) नाम दिया।

काइनेटिन जैसे पदार्थ के लिए लेथाम (1963) द्वारा प्रस्तावित पद साइटोकाइनिन को सभी ने स्वीकारा है।

साइटोकाइनिन्स के अभिलक्षण
(Characteristics of Cytokinins)

1. कोशिका विभाजन की शुरूआत करना;
2. जीर्णता में विलम्बन (रिचमॉण्ड–लैंग प्रभाव);
3. ऊतक संवर्धन में उपयोग;
4. शीर्ष कलिका सुषुप्ति में प्रति–क्रिया करना और
5. लघुदिवस पौधों में पुष्पन को प्रेरित करना।

प्राकृतिक रूप से प्राप्त साइटोकाइनिन
(Naturally occuring Cytokinin)

साइटोकाइनिन्स को अब तक नारियल के दूध (नारियल के तरल भ्रूणपोष), टमाटर के कच्चे फलों से निस्सारित (extract) किया गया है। लेथम ने मक्का के कच्चे दानों से जीएटिन को शुद्ध क्रिस्टल रूप में प्राप्त किया।

स्कूग और आर्मस्ट्रांग (1970) के अनुसार पौधों से कम से कम सात प्रकार के सुस्थापित साइटोकाइनिन प्राप्त किए गए हैं जैसे 2 ip, 2 i PA, सिस–राइबोसिल्जीएटिन, जिएटीन, ms 2i PA, ms- राइबोसिल–ज़िएटीन और डाइहाइड्रोजिएटीन। रासायनिक रूप से साइटोकाइनिन रूपान्तरित एडिनीन हैं।

साइटोकाइनिन का जैवसंश्लेषण
(Biosynthesis Cytokinin)

मूल शीर्ष (Root tip) इसके संश्लेषण का महत्वपूर्ण स्थान होता है। किन्तु विकासशील बीज और एधा ऊतक भी साइटोकाइनिन जैवसंश्लेषण के स्थान होते हैं।

साइटोकाइनिन्स के उपयोग
(Applications of Cytokinins)

इनके कुछ महत्वपूर्ण उपयोग नीचे दिए जा रहे हैं :

1. कोशिका विभाजन (Cell division) – साइटोकाइनिन्स का यह सर्वाधिक महत्वपूर्ण गुण है। साइटोकाइनिन अकेले कार्य कभी नहीं करते। ऑक्सिन्स के साथ साइटोकाइनिन गैर विभज्योतिक ऊतकों में भी कोशिका विभाजन को प्रोत्साहित करते हैं। माध्यम में साइटोकाइनिन की मात्रा अधिक व ऑक्सिन की कम हो तो प्ररोह का विकास होता है। साइटोकाइनिन की मात्रा कम व ऑक्सिन की अधिक होने पर केवल जड़ों का विकास होता है।

2. संरचना विकास (Morphogenesis) – अंगों के निर्माण में साइटोकाइनिन्स की भिन्न प्रतिक्रिया है। तंबाकू पिथ में IAA तथा काइनेटिन के एक संतुलित स्तर से एक अविभाजित और आकारहीन (amorphous) कैलस पैदा होता है और अगर इस संतुलन को काइनेटिन अनुपात बढ़ाकर (या IAA घटाकर या काइनेटिन बढ़ाकर) बदल दें तो पिथ से कलिका निर्माण हो जाता है, जो आगे चलकर पूरे तंबाकू पौधे में उग सकता है।

3. शीर्ष प्रभुत्व (Apical dominance) – साइटोकाइनिन कली की आम शीर्ष प्रभुता पर प्रतिक्रिया करता है। शीर्ष कलिका की उपस्थिति में भी साइटोकाइनिन को पार्श्वीय कलिका निर्माण प्रेरित करते पाया गया है।

4. रिचमाण्ड–लैंग प्रभाव (The Richmond-Lang effect) – इसे जीर्णता में विलम्ब (delay in senescence) भी कहा जाता है। रिचमॉण्ड एवं लैंग (1957) ने *जैंथिअम* (Xanthium) की अलग की हुई पत्तियों पर कार्य करते समय पाया कि साइटोकाइनिन कई दिनों तक क्लोरोफिल को लुप्त होने और प्रोटीनों के न्यूनीकरण को स्थगित रखने में सक्षम था, जो पत्तों की जीर्णता प्रक्रिया के साथ होती रहती हैं। उन्होंने देखा कि उपचारित पत्तियां बीस दिनों के बाद तक हरी थी जबकि नियंत्रित पत्तियां पूरी तरह पीली थीं और उनके शीर्ष और किनारे मृत हो चुके थे।

5. प्रोटीन संश्लेषण (Protein synthesis) – साइटोकाइनिन उपचार के बाद प्रोटीन संश्लेषण की दर में वृद्धि का प्रदर्शन किया गया है।

6. साइटोकाइनिन और फ्लोरिजेन (Cytokinin and Florigens) – लघुदिवस पौधों में पुष्पन की प्रेरणा देने में साइटोकाइनिन की शक्ति अब भली प्रकार स्थापित हो चुकी है।

7. व्यापारिक उपयोग (Commercial application) – साइटोकाइनिन के उपयोग से फलों की निधानी आयु (shelf life) में वृद्धि जड़ जमाव में शीघ्रता और कुशल मूलीय प्रणाली उत्पन्न करने, पैदावार बढ़ाने, और मूंगफली में तेल मात्रा में वृद्धि करने के लिए प्रयोग किए जा रहे हैं।

ऐब्सिसिक अम्ल
(ABSCISSIC ACID) (ABA)

यह प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला वृद्धिरोधक है। यह प्रतिबल हार्मोन (stress hormones) रूप में भी कार्य करते हुए पौधों को प्रतिकूल वातावरणीय दशाओं का सामना करने में सहायता करता है।

ऐब्सिसिक अम्ल की रासायनिक संरचना
(Chemistry of Abscissic Acid)

इसकी पहली बार पहचान वेयरिंग (1965) ने *एसर स्यूडोप्लेटेनस* (Acer pseudoplatanus) के पत्तों और कलियों में की थी और इसे डॉर्मिन (dormin) नाम दिया था। वेयरिंग और उनके सहकर्मियों ने देखा कि डॉर्मिन, ऐडिकॉट और सहकर्मियों (1963) द्वारा युवा कपास फल में प्राप्त एक पदार्थ के समान था। ऐडिकॉट ने इसे ऐब्सिसिन II नाम दिया था। इसलिए एक ही यौगिक के दो नाम थे, किन्तु 1967 में दोनों को एक नाम – ऐब्सिसिक अम्ल दिया गया।

ऐब्सिसिक अम्ल का जैवसंश्लेषण
(Biosynthesis of Abscissic Acid)

यह अल्गी, लिवरवर्ट तथा बैक्टीरिया को छोड़कर सभी पौधों में संश्लेषित होता है। ABA का निर्माण ज़ैन्थोफिल से हो सकता है, जैसे वायोलाजैन्थिन (violaxanthin) जिसमें C_{40} होता है। वायोलाजैन्थिन ABA के जैवसंश्लेषण के लिए पूर्वगामी रूप में कार्य करता है।

ऐब्सिसिक अम्ल की भूमिका और उपयोग
(Role and application of Abscissic acid)

ABA की कुछ प्रमुख भूमिकाएं ये हैं :

1. कलिका प्रसुप्ति (Bud dormancy) – यह माना जाता है कि कलिका प्रसुप्ति का नियंत्रण अंतर्जात (endogenous) वृद्धिरोधकों जैसे ABA के स्तरों में परिवर्तन द्वारा होता है।

2. विलगन (Abscission) – ऐडिकॉट एवं सहकर्मियों (1964) ने देखा कि ABA कपास के पौधों में पर्ण विलगन बढ़ा देता है। तभी से यह माना जाता है कि वृद्धिरोधी हार्मोन (ABA) ही विलगन का कारण है, फिर भी विलगन की इसकी निश्चयात्मक भूमिका की स्थापना अभी करनी है।

3. पुष्प समारंभन (Flower initiation) – कतिपय लघुदिवस पौधों, जैसे *राइबिस निग्रम* (Ribes nigrum), *फॉरबिटिस* (*Phorbitis*) और *फ्रैगेरिया* (*Fragaria*) में ABA दीर्घदिवसों में पुष्पन का समारंभ करता है।

4. रंध्रीय शरीर क्रिया (Stomatal Physiology) – ABA रंध्रों के बन्द होने का नियंत्रण करता है।

5. एथिलीन का मोचन (Release of Ethylene) – अब यह सुस्थापित हो गया है कि ABA एथिलीन निकलनें को प्रेरित करता है।

6. प्रतिक्रिया GA (Counteract GA) – ABA GA के बहुत से प्रभावों, जैसे जौ के नवोद्भिद् (seedling) में हाइड्रोलेजों और α-एमाइलेजों के प्रेरण, के विपरीत क्रियाएं करता है।

7. प्रतिबल हार्मोन के रूप में ABA की भूमिका (Role of ABA as stress Hormone) – विशेष रूप से जल तनाव की स्थितियों में ABA की सांद्रता पादपों में बढ़ जाती है। ABA की सांद्रता वृद्धि जीर्णता का संकेत होती है, जिसके लक्षण होते हैं, क्लोरोफिल की हानि, प्रकाश–संश्लेषण की दर में कमी, और न्यूक्लीइक अम्ल तथा प्रोटीन उपापचय में परिवर्तन। इस प्रकार, ABA को पौधों में जीर्णता शुरू करने वाला एक रसायन माना जा सकता है।

एथिलीन (ETHYLENE)

नेलजूबो (1901) ने दर्शाया कि एथिलीन गैस जड़ों की अनुवर्तनी अनुक्रियाओं (tropistic responses) को उल्लेखनीय रूप से बदल सकती है। डेनी ने बतलाया है कि एथिलीन फल पकने को प्रेरित करने में अति प्रभावी होती है। अंत में गेन (1934) ने स्थापित किया कि एथिलीन फल पकाने का एक वास्तविक प्राकृतिक पदार्थ होती है।

एथिलीन सामान्य तापमानों पर एक गैस होती है, जिनमें पौधे जीवित रह सकते हैं। यह सरलता से विश्वसनीय नहीं है कि कोई गैस भी पादप हार्मोन हो सकती है और यह देखना लगभग कठिन हो जाता है कि यह पौधों में किस तरह विसरित होती है। किन्तु अब यह सुस्थापित हो चुका है कि यह पौधों में पायी जाती है और हार्मोन जैसा कार्य करती है। अब यह सभी जानते हैं कि फूल, पत्ते, तना, जड़, कंद और बीज एथिलीन उत्पन्न करते हैं।

पौधों द्वारा एथिलीन की उत्पत्ति को काफी पहले से लोग जानते रहे हैं। एथिलीन उत्पादन जीर्णता के ठीक पहले अधिकतम श्वसन के दौरान पायी जाती है, जिसके बाद श्वसन दर में वृद्धि

हो जाती है, जिसे *क्लाइमैक्टेरिक वृद्धि* (climacteric rise) कहते हैं। यहां यह सोचा जा सकता है कि एथिलीन निर्माण फलों के पकने की क्रिया से घनिष्ठ रूप से जुड़ा होगा।

एथिलीन की बहिर्जात (exogenous) आपूर्ति पर किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि इसकी अनुक्रियाएं ऑक्सिन्स की उच्च सांद्रता में देखी गई अनुक्रियाओं जैसी होती है।

एथिलीन का जैव संश्लेषण
(Biosynthesis of Ethylene)

पौधों के भीतर इसके संश्लेषण के बारे में बहुत कम ज्ञात है, किन्तु ऐसा लगता है कि मेथिओनिन (एक एमिनो अम्ल) एथिलीन का तात्कालिक पूर्वगामी (precursor) हो सकता है।

एथिलीन की भूमिका (Role of Ethylene)

रूसी वैज्ञानिकों–काबाक्निक एवं रोजिस्काया (1964) ने एथिलीन त्यागने वाले यौगिक को एथेरेल नाम दिया। उन्होंने एथेरेल का संश्लेषण किया और रासायनिक रूप से यह (2-क्लोरोऐथिल–फॉस्फोनिक अम्ल) होता है। एथेरेल को पादप उपापचय का नियामक जाना जाता है।

तना दीर्घीकरण रोककर और अनुप्रस्थ विस्तार उत्तेजित करके एथिलीन वृद्धि को बदल देता है जिससे तना फूला हुआ दीखता है, एथिलीन पत्तों, फूलों और फलों का विलगन बढ़ाता है।

एथिलीन की भूमिका और उपयोग
(Role and Application of Ethylene)

1. विलगन (Abscission) – एथिलीन विलगन का मुख्य त्वरक (accelerator) होता है। यह पत्तों, पर्णवृंतों (petioles), फूलों और फलों के पूर्वविलगन और जीर्णन से सम्बद्ध परिवर्तनों को प्रेरित और प्रोन्नत करता है। इसीलिए एथिलीन को पादप जीर्णताकारी (phytogerontological) हार्मोन कहा जाता है।

2. प्राकृतिक पक्वन और क्लाइमेक्टिरक (Natural ripening and climacteric) – पहले के अध्ययनों से पता चलता था कि एथिलीन प्रजनन क्षमता हीनता का पदार्थ है और इसीलिए इसे एक मात्र पक्वन पदार्थ माना जाता था। हाल में अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि क्लाइमेक्टोरिक उत्पन्न होने के पहले ही एथिलीन उत्पन्न हो जाता है। इसलिए अब से इसे प्राकृतिक पक्वन हार्मोन माना जाता है।

3. क्लोरोफाइलेज क्रिया (Chlorophyllase activity) – एथिलीन उल्लेखनीय रूप ये *क्लोरोफाइलेज* क्रिया बढ़ा देता है। विहरितन क्रिया का यह एक कारण हो सकता है।

4. फलों का पक्वन (Ripening) – पक्वन और प्रौढ़ता (maturity) इस गैस हार्मोन के दो प्रमुख गुण हैं। पत्ती पर स्प्रे रूप में प्रयोग करने पर एथिलीन प्रौढ़ता बढ़ाता है और अनन्नास, तथा अंजीर में एक समान पक्वन प्रेरित करता, सजावटी पौधों में फलन प्रेरित करता है और नर्सरी स्टॉक में कटाई पूर्व विपर्णन (preharvest defoliation) उत्पन्न करता है।

5. वृद्धि पर प्रभाव (Influence on growth) – एथिलीन सामान्यतः प्ररोह व मूल की लम्बाई में वृद्धि को संदमित (Inhibit) करती हैं। इसके प्रयोग से लम्बाई बढ़ना रूक कर प्ररोह व मूल की मोटाई में वृद्धि होती हैं। अपस्थानिक जड़ों का निर्माण बढ़ जाता है तथा पादप में क्षैतिज वृद्धि बढ़ जाती है।

आज इथेफोन (2, chloroethyl phosphoric acid) को कृत्रिम रूप से फलों को पकाने के काम में लिया जाता है। इस पदार्थ से एथिलीन गैस निकलती है जो फलों को पकाने का काम करती है। भारत सहित अधिकांश देशों में फलों (आम, अंगूर, केला, पपीता, इत्यादि) को पकाने के लिए इथेफोन का प्रयोग औद्योगिक स्तर पर किया जा रहा है। इस प्रकार से पके फल रंग, रूप और सुगंध में प्राकृतिक फलों जैसे लगते हैं। यह चेरी, अखरोट आदि फलों के एक समान परिपक्वन हेतु भी उपयोगी है।

जीर्णता
(SENESCENCE)

सभी जीवों के जीवन काल में परिपक्व अवस्था (Maturity) प्राप्त करने के पश्चात् इस प्रकार की अवनतकारी क्रियाएं (Deteriorative processes) होती हैं जिससे अंत में उनकी मृत्यु हो जाती है। किसी जीव की परिपक्व अवस्था से लेकर मृत्यु होने तक के काल (Period) को जीर्णता कहते हैं। इस काल के दौरान जीव कमजोर होता जाता है तथा उसकी कार्यक्षमता कम होती जाती है। उपापचयी पदार्थ (Metabolic substance) संग्रहित हो जाते हैं तथा शुष्क भार में कमी आ जाती है। लियोपोल्ड (Leopold, 1961) ने पादपों में तीन प्रकार की जीर्णता का वर्णन किया है–

1. सम्पूर्ण पादप जीर्णता (Whole plant senescence) – बहुत से एकवर्षी पादपों (Annuals) जैसे कि गेहूँ, चना, टमाटर इत्यादि में फल बनने के पश्चात् सम्पूर्ण पादप पीला होकर अन्ततः मृत हो जाता है।

2. प्ररोह जीर्णता (Shoot senescence) – बहुवर्षी पादपों जैसे अल्फाल्फा (Alfalfa) में पादप का उपरिभूमिक (Aerial) भाग प्रतिवर्ष मृत हो जाता है तथा भूमिगत तना व जड़ें जीवित रहती हैं। आगामी वर्ष में भूमिगत भाग में कलिकाएं बनती हैं जो कि वायवीय भाग का पुनः निर्माण करती हैं।

3. पर्णपाती जीर्णता (Deciduous senescence) – बहुत से पादपों में पतझड़ में पत्तियाँ मृत होकर झड़ जाती हैं। अनुकूल परिस्थितियाँ आने पर पत्तियाँ पुनः विकसित हो जाती हैं। जीर्णता मुख्यतः ABA, इथाइलीन इत्यादि के द्वारा नियंत्रित होती हैं।

विलगन
(Abscission)

पत्तियों, पुष्पों एवं फलों के मातृ पादप से अलग होकर गिरने को विलगन कहते हैं। यह एक जैविक क्रिया है जो इन पादप अंगों के आधारीय भाग (Basal part) की कोशिकाओं में परिवर्तन के परिणामस्वरूप होती है। इन स्थानों पर एक निश्चित क्षेत्र की कोशिकाओं की मध्य पटलिकाओं (Middle lamellae) एवं बाह्य भित्तियों (Outer walls) का पैक्टीनेज (Pectinase) तथा सेल्यूलोज (Cellulase) एंजाइम की सहायता से पाचन हो जाता है। मध्य पटलिका या भित्तियों के टूटने के कारण ये कोशिकाएं एक दूसरे से अलग होने लगती हैं। इस क्षेत्र के ऊत्तक मुलायम तथा कमजोर हो जाते हैं तथा इस स्थान पर एक विलगत पर्त (Abscission layer) का निर्माण हो जाता है। विलगन परत से कुछ नीचे की कोशिकाएं विभाजन शील होकर कॉर्क कोशिकाओं का निर्माण करती हैं जो कि एक रक्षात्मक स्तर (Protective layer) अथवा विलगन क्षेत्र (Abscission zone) का निर्माण करती हैं। तेज हवा के झोंके अथवा वर्षा के परिणामस्वरूप ये पादप अंग विलगन परत वाले स्थान से टूटकर मातृ पादप से अलग होकर गिर जाते हैं।

विलगन हॉर्मोन संतुलन में बदलाव के परिणामस्वरूप होता है। इस प्रक्रिया में एब्सिलिक अम्ल महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

दीप्तिकालिता
(Photoperiodism)

पुष्पीय पादपों (Flowering plants) में निश्चित समय तक कायिक वृद्धि होने के पश्चात् पौधे जनन अवस्था (Reproductive phase) में प्रवेश करते हैं तथा उनमें पुष्पन की क्रिया प्रारम्भ हो जाती है। कायिक अवस्था (Vegetative phase) भिन्न–भिन्न पौधों में भिन्न–भिन्न अवधि की होती हैं। पौधे के कायिक अवस्था से पुष्पन अवस्था में प्रवेश को कई कारकों द्वारा नियंत्रित किया जाता है। इसमें से एक प्रमुख कारक प्रकाश की अवधि अर्थात् दीप्तिकालिता है।

पुष्पन पर दीप्तिकालिता के प्रभाव का अध्ययन सर्वप्रथम दो अमेरिकी वैज्ञानिकों गार्नर तथा एलार्ड (Garner and Allard, 1920) ने किया। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि पुष्पन को प्रभावित करने वाला क्रान्तिक कारक (Critical factor) प्रकाश काल की अवधि है। दीप्तिकालिता को परिभाषित करते हुए उन्होंने बताया कि दिन ही वह लम्बाई जो पौधों में पुष्पन के लिए अनुकूल हो तथा दिन की आपेक्षित लम्बाई अथवा आपेक्षिक दीप्तिकाल के प्रति पौधे की अनुक्रिया को दीप्तिकालिता कहते हैं। हिलमेन (Hillman, 1969) के अनुसार प्रकाश तथा अंधकार अवधियों के अन्तरालों के प्रति पौधों की अनुक्रिया को दीप्तिकालिता कहते हैं। तम्बाकू (Nicotiana tabacum), *ब्रायोफिलम* (Bryophyllum), *कॉसमॉस* (Cosmos), एस्टर (Aster) आदि पौधों में लम्बी अन्धकार अवधि व छोटे दीप्तिकाल की आवश्यकता होती है। इसके विपरीत गेहूँ (Wheat), मूली (Radish), पालक (Spinach) इत्यादि में पुष्पन के लिए छोटी अन्धकार अवधि तथा लम्बे दीप्तिकाल की आवश्यकता होती है।

दीप्तिकालिता अनुक्रियाओं के आधार पर पौधों को निम्न वर्गों में बाँटा गया है–

(i) **अल्प दीप्तिकाली पादप या लघु दिवस पादप** (Short day plants - SDP) – ऐसे पौधे जो निश्चित क्रांतिक दीप्तिकाल (Critical photoperiod) से कम अवधि में दीप्तिकाल उपलब्ध होने पर पुष्पन करें, लघुदिवस पादप कहलाते हैं, उदा. गन्ना, *डहेलिया* इत्यादि।

(ii) **दीर्घ दीप्तिकाली पादप या दीर्घ दिवस पादप** (Long day plants - LDP) – वे पौधे जिनमें पुष्पन के लिए क्रान्तिक दीप्तिकाल से दीर्घ अवधि का दीप्तिकाल आवश्यक हो, दीर्घ दिवस पादप कहलाते हैं, उदाहरण– पालक, मूली, चुकन्दर इत्यादि।

(iii) **दिवस उदासीन पादप** (Day neutral plants) – वे पौधे जो लगभग सभी सम्भव दीप्तिकालों में पुष्पीकरण कर सकते हैं, दिवस उदासीन पौधे कहलाते हैं, उदाहरण– टमाटर, ककड़ी, कपास आदि।

ग्राही अंग (Receptive organs) – दीप्तिकाल को ग्रहण करने का कार्य मुख्य रूप से पत्तियों एवं कलिकाओं के द्वारा किया जाता है।

क्रियाविधि (Mechanism) – प्रकाशग्राही वर्णक फाइटोक्रोम के दो रूप पुष्पन को प्रेरित करते हैं। फाइटोक्रोम मुख्यतः P730 (Pfr) तथा P660 (Pr) के रूप में पाया जाता है। बोर्थबिक एवं हैन्ड्रिक्स (Borthwick and Hendricks, 1950) के अनुसार प्रदीप्तकाल में पौधे फाइटोक्रोम के Pfr रूप का संचय करते हैं। Pfr, LDP में पुष्पन को संदमित करता है। अँधेरे में Pfr का Pr में रूपान्तरण हो जाता है। फाइटोक्रोम का Pr रूप SD पादपों में पुष्पन को उद्दीपित करता है तथा LD में इससे पुष्पन संदमित होता है।

वसन्तीकरण
(Vernalization)

अनेक पादपों में पुष्पन की क्रिया पर उचित दीप्तिकालों के अतिरिक्त तापक्रम का भी गहन प्रभाव पड़ता है। पौधे के तापक्रम के प्रति व्यवहार का सर्वप्रथम वैज्ञानिक अध्ययन लायसैन्को (Lysenko) ने चावल की दो किस्मों शीत किस्म एवं बसन्त किस्म

(Winter variety and spring variety) पर किया।

एकवर्षी (Annuals) पादपों में पुष्पन पर प्रकाश का मुख्य प्रभाव पड़ता है तथा तापमान का प्रभाव द्वितीयक होता है। द्विवर्षी पादपों में स्थिति भिन्न होती है। इसमें प्रथम वर्ष में केवल कायिक वृद्धि होती है तथा पुष्पन द्वितीय वर्ष में होता है। पुष्पन से पूर्व इन पादपों का शीत ऋतु के निम्न तापक्रम में उद्भासित अथवा उपचारित होना आवश्यक होता है। अगर द्विवर्षी पादपों को निम्न तापमान नहीं मिलता तो इनमें जनन अवस्था का प्रारम्भ नहीं होता है। कोआई, 1960 के अनुसार "द्रुतशीतन उपचार (Chilling treatment) द्वारा पुष्पन की योग्यता के उपार्जन को वसन्तीकरण कहते हैं।"

यदि पानी सोखे हुए (Water soaked) बीजों अथवा नवोद्भिदों (Seedlings) को निम्न तापक्रम (1-10°C) उपचार दिया जाता है तो उसके प्रभाव से उनकी वृद्धि त्वरित हो जाती है तथा उनमें पुष्पन भी जल्दी होता है। इस प्रभाव का अध्ययन गेहूँ, चावल, कपास इत्यादि में किया गया है।

संभवतः पत्तियों में हॉर्मोन के समान कुछ ऐसे पदार्थ बनते हैं जो वसन्तीकरण को नियंत्रित करते हैं। इस अज्ञात पदार्थ को वर्नेलिन (Vernalin) कहा गया है। लैंग (Lang, 1952) के अनुसार वर्नेलिन पुष्पन की क्रिया को आरम्भ करने वाले हॉमोन फ्लोरीजन (Florigen) का पूर्वगामी (Precursor) है।

शीतकालीनपादप $\xrightarrow{\text{कमतापमान}}$ वर्नेलिन ⟶ फ्लोरीजन ⟶ पुष्पन

ग्राही अंग (Receptive organs) – पौधों के भ्रूण तथा विभज्योतक शीतन उपचार के ग्राही अंग है। वसंतीकरण से पौधों में कृषि सम्बन्धी कई उपयोगी परिवर्तन किए जा सकते है। इसकी सहायता से पौधों के कायिक काल को कम करके, उनमें समय पूर्व ही पुष्पन को प्रेरित किया जा सकता है। यद्यपि वसंतीकरण क्रिया मुख्यतः शीतकालीन पौधों को प्रभावित करती है परन्तु कई ग्रीष्मकालीन पौधों में भी इससे उपयोगी परिवर्तन किये गए हैं।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. सजीवों के परिमाण में स्थायी तथा अनुत्क्रमणीय परिवर्तन को वृद्धि कहते हैं।
2. वृद्धि आनुवंशीकीय, वातावरणीय तथा आन्तरिक कारकों द्वारा प्रभावित होती है।
3. ऑक्सिन, जिब्बरेलिन, साइटोकाइनिन, इथाइलिन एवं एब्सिसिक अम्ल वृद्धि को नियंत्रित करने का कार्य करते हैं।
4. एब्सिसिक अम्ल एवं इथाइलीन वृद्धि निरोधक हॉर्मोन हैं।
5. सभी सजीव परिपक्व अवस्था प्राप्त करने के पश्चात् जीर्णता प्रदर्शित करते हैं।
6. विलगन वह क्रिया है जिसके द्वारा पत्तियाँ, पुष्प एवं फल प्राकृतिक रूप में मातृ पादप से अलग हो जाते हैं।
7. अनुकूल प्रकाश अवधि अर्थात् दीप्तिकालिता पौधे में पुष्पन को उद्दीपित करती है।
8. द्रुत शीतन उपचार द्वारा पादपों में पुष्पन की योग्यता करने को वसन्तीकरण कहते हैं।
9. बीजों में अंकुरण के अस्थायी निलंबन को सुप्तावस्था कहते हैं।
10. सुप्तावस्था के पश्चात् परिस्थितियों में बीज अंकुरित होकर नवोद्भिद का निर्माण करते हैं।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न

1. इनमें से कौनसा ऑक्सिन हार्मोन का अभिलक्षण है–
   (अ) ध्रुवीय स्थानान्तरण (ब) विलगन
   (स) मूलीय आरंभन (द) उपरोक्त सभी
2. निम्न में से कौनसा हार्मोन दीर्घ दिवस पादप पुष्पन को प्रेरित करता है–
   (अ) जिब्बरेलिन (ब) ऑक्सिन
   (स) साइटोकाइनिन (द) इथिलीन
3. इनमें से कौनसा घाव हार्मोन है–
   (अ) जिब्बरेलिन (ब) ट्रॉमेटिक अम्ल
   (स) एबसिसिक अम्ल (द) ऑक्सिन
4. सबसे पहले जिस पादप हार्मोन की खोज हुई, वह है–
   (अ) ऑक्सिन (ब) जिब्बरेलिन
   (स) इथाइलीन (द) एब्सिसिक अम्ल
5. गैसीय अवस्था में मिलने वाला हार्मोन है–
   (अ) ऑक्सिन (ब) जिब्बरेलिन
   (स) एब्सिसिक अम्ल (द) इथाइलीन
6. SDP पादप है–
   (अ) गन्ना (ब) तम्बाकू
   (स) मूली (द) चुकन्दर

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

1. पादप वृद्धि नियामक को परिभाषित कीजिये।
2. IAA,GA तथा ABA का पूर्ण नामकरण लिखें।
3. वेन्ट द्वारा किये गये प्रयोग को चित्र द्वारा समझाओ।
4. ऑक्सिन्स के अभिलक्षण लिखिये।
5. 2,4-D, 2,4,5-T तथा MCPA को समझाइये।
6. जिब्बरेलिनो के अभिलक्षण लिखिये।